भाषाविज्ञान एवं हिन्दी भाषा–1

Paper Code – 20HND21C4

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय
रोहतक–124 001

Printed at: MDU Press

Copyright © 2020, Maharshi Dayanand University, ROHTAK

All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

भाषाविज्ञान एवं हिंदी भाषा

एम. ए. (पूर्वार्द्ध) हिंदी

चतुर्थ प्रश्न पत्र

इकाई – भाषा **स्वलिखित पृष्ठ**

1.0 परिचय

1.1 इकाई का उद्देश्य

भाषा और भाषाविज्ञान

1.2 भाषा की परिभाषा और प्रवृत्ति

1.2.1 भाषा की परिभाषा

1.2.2 भाषा की प्रवृत्ति

1.3 भाषा अध्ययन के क्षेत्र

1.4 भाषा की व्यवस्था और व्यवहार

1.4.1 भाषा की व्यवस्था

1.4.2 भाषा–व्यवहार

1.5 भाषा की संरचना

1.6 भाषा अध्ययन की दिशाएँ

1.6.1 वर्णनात्मक

1.6.2 ऐतिहासिक

1.6.3 तुलनात्मक

1.7 सारांश

1.8 मुख्य शब्दार्थ

1.9 स्वप्रगति परीक्षण

1.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.11 पठनीय पुस्तकें

1.0 परिचय

भावाभिव्यक्ति के साधन को भाषा कहते हैं। भाषा के ही माध्यम से मनुष्य अपने भाव या विचार को दूसरों तक पहुँचाता है और दूसरों के भाव स्वयं ग्रहण करता है। अंग्रेजी में भाषा के लिए लैग्वेज (Language) शब्द का प्रयोग किया जाता है। भाषा की संरचना में ध्वनि, वर्ण, अक्षर, शब्द, पद, वाक्य और अर्थ आदि इकाइयाँ होती हैं।

भाषा का उद्‌भव मनुष्य के उद्‌भव के साथ माना गया है। इसका मुख्य आधार है कि मनुष्य सामाजिक प्राणी है। भाषा के बिना समाज का होना असंभव है और समाज के बिना भाषा का अस्तित्व संदिग्ध हो जाएगा।

भाषा की विभिन्न इकाइयों का अध्ययन, भाषा–विकास, भाषा–परिवर्तन और प्रयोग आदि का व्यावहारिक और प्रयोगात्मक अध्ययन ही भाषाविज्ञान है। इस प्रकार भाषा का सुसंगठित अध्ययन ही भाषाविज्ञान है। इस प्रकार भाषाविज्ञान के आधार पर ही भाषा का सटीक ज्ञान संभव है।

भारतवर्ष को आर्यभूमि की संज्ञा दी जाती है। इसी आधार पर यहाँ की भाषाओं को भारतीय आर्य भाषाएँ नाम दिया गया है। इन भाषाओं को अध्ययन के लिए तीन वर्ग बनाए गए हैं – प्राचीन भारतीय आर्य भाषाओं में वैदिक और संस्कृत दो भाषाओं को स्थान दिया गया है। वैदिक भाषा भारत की ही नहीं, विश्व की प्राचीनतम भाषा है। इसमें चारों वेदों की रचना हुई है। भाषा–विकासक्रम में दूसरा वर्ग है – मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाएँ। इसमें पाली, प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं का क्रमशः विकास हुआ है। तृतीय वर्ग में अपभ्रंश से विकसित आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं को रखा गया है।

हिंदी आधुनिक भारतीय आर्य भाषा है। यह भारतवर्ष की राजभाषा, जनभाषा, संपर्क भाषा, संचार भाषा और व्यावहारिक रूप में राष्ट्रभाषा है।

हिंदी भाषा का प्रयोग भारत के बहुसंख्यक लोगों द्वारा किया जाता है। हिंदी को मुख्यतः पश्चिमी हिंदी और पूर्वी हिंदी दो उपभाषाओं में बाँटा गया है। हिंदी की कई बोलियों में हिंदी भाषी लोग आपस में संवाद करते हैं। विस्तृत क्षेत्र में प्रयोग होने से इसके स्वरूप में विविधता आ गई। इसलिए 'खड़ी बोली' स्वरूप का निर्धारण किया गया। वर्तमान वैज्ञानिक और कंप्यूटर युग में हिंदी की अच्छी गति मिल गई है। हिंदी को व्यवस्थित और स्वरूप में एकरूपता लाने के लिए मानकीकरण प्रक्रिया चल रही है। नागरी लिपि वैज्ञानिक लिपि है। नागरी हिंदी की लिपि है। नागरी लिपि को भी मानकीकृत करके हिंदी को और अधिक उपयोगी बना दिया गया।

1.1 इकाई के उद्देश्य

भाषा और भाषाविज्ञान का परिचयात्मक और स्वरूपगत अध्ययन

- समाज की परम उपलब्धि मानवीय भाषा की समान्य और वैज्ञानिक परिभाषा का ज्ञानार्जन कराना।
- मनुष्य की समस्त भाषाओं की पूर्णतः व्यावहारिक और मान्य प्रवृत्तियों का परिचय कराना।
- जो जितना ही महत्त्वपूर्ण होता है, उसकी व्यवस्था भी उतनी ही श्रेष्ठ होती है। भाषा मानव की परम उपलब्धि है। इसलिए भाषा का संरचनात्मक और व्यवस्था आधारित अध्यन कराना।
- भाषा का प्रयोग अनेक संदर्भों में अनेक रूपों में किया जाता है, जिससे मानव जीवन में गति और प्रगति आती है। इस प्रकार भाषा के विविध व्यवहारों का अध्ययन किया जाएगा।
- जब किसी विषय या संदर्भ का एकाधिक दिशाओं से अध्ययन किया जाता है, तो उसकी संरचना, विकास, विशेषताओं और महत्त्व आदि का ज्ञान होता है। यहाँ भाषा का वर्णनात्मक ऐतिहासिक और तुलनात्मक अध्ययन कराया जाएगा। इससे भाषा के अनुकूल अध्ययन का मार्ग प्रशस्त होगा।

1.2 भाषा–अध्ययन के क्षेत्र

भाषा का संबंध मानव के सहज जीवन–यापन से लेकर ज्ञान–विज्ञान के विविध क्षेत्रों से जुड़ा हुआ है। इसलिए भाषा–अध्ययन का क्षेत्र विस्तृत है। माना सृष्टि के समस्त पशु–पक्षी भाषा का प्रयोग करते हैं, किंतु भाषा विज्ञान में केवल मानव की भाषा का अध्ययन किया जाता है। विश्व के समस्त मानव किसी न किसी भाषा का प्रयोग करते हैं। विश्व की समस्त भाषाओं का अध्ययन वर्गीकरण करके किया जाता है। विभिन्न भाषाओं को भौगोलिक निकटता के आधार पर पारिवारिक वर्गीकरण करके किया जाता है। भाषा अध्ययन के अनेक क्षेत्र हैं। इसे कुछ प्रमुख वर्गों में इस प्रकार वर्गीकृत कर सकते हैं –

क. **बोली** – विभिन्न अंचलों में भाव आदान–प्रदान करने के लिए बोली का प्रयोग किया जाता है। इसे समान स्वीकृति मिली हाती है, किंतु इसका व्याकरण सम्मत रूप नहीं होता है। इसका अध्ययन मुख्यतः सर्वेक्षण आधार पर किया जाता है। हिंदी के पश्चिमी क्षेत्र की ब्रज, हरियाणवी, कन्नौजी कौरवी और बुंदेली बोली हैं, तो पूर्वी हिंदी की अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी बोलियाँ हैं। बोलियाँ पर सतत् शोधकार्य भी चलता रहा है। इस बोली में समृद्ध लोकसाहित्य संभावित होता है।

ख. **साहित्यिक भाषा –** साहित्य–सृजन भाषा के ही आधार पर होता है। युग परिस्थिति के अनुसार भाषा का परिवर्तित रूप सामने आता है। इस प्रकार साहित्य की भाषा में भी परिवर्तन होना स्वाभाविक है। हिंदी के भक्तिकाल में अवधी, ब्रज और मिश्रित (सधुक्कड़ी) भाषा का प्रयोग होता था, तो रीतिकाल में 'ब्रज' और आधुनिक काल में खड़ी बोली का प्रयोग चलता रहा है। ये भाषा–अध्ययन के क्षेत्र हैं।

ग. वर्तमान युग को मीडिया युग कहा गया है। समाचार पत्र, आकाशवाणी और दूरदर्शन संचार माध्यम हैं। इनकी भाषा और अभिव्यक्ति का अध्ययन किया जाता है।

घ. इस युग को कंप्यूटर युग भी कहा गया है। अब कंप्यूटर इलेक्ट्रानिक (प्रौद्योगिकी) में प्रयुक्त भाषा अध्ययन विशेष महत्त्वपूर्ण हो गया है।

वर्णनात्मक पद्धति

इस पद्धति में किसी भी भाषा की संरचना की किसी एक इकाई अथवा एकाधिक इकाइयों का विवरणात्मक अध्ययन किया जाता है; यथा– यदि हिंदी भाषा की लघुतम लिखित इकाई का वर्णनात्मक अध्ययन करेंगे, तो सर्वप्रथम उनका वर्गीकरण करके स्वरूप की विवेचना करेंगे।

'हिंदी के वर्णों को मुख्यतः दो वर्गों में विभक्त करते है– स्वर और व्यंजन।

स्वर की संख्या ग्यारह है – अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ

स्वर मात्राएँ – ा, ि, ी, ु, ू, ृ, े, ै, ो, ौ

कवर्ग – क ख ग घ ङ

चवर्ग – च छ ज झ ञ

स्वर्ग – ट ढ ड द ण

तवर्ग – त थ द ध न

पवर्ग – प फ ब भ म

अंतस्थ – य र ल व

ऊष्म – श, ष, स, ह

इसी क्रम में इन वर्णों के उच्चारण और प्रयोग का विवेचन किया जाता है। हिंदी की ध्वनि/वर्ण से वृहत्तर इकाइयों– अक्षर, शब्द, पद और वाक्य आदि का इसी प्रकार संरचनात्मक और प्रयोगात्मक वर्णन किया जाता है।

यह एक भाषा की संरचना की श्रेष्ठतम पद्धति है।

ऐतिहासिक पद्धति

यदि हिंदी भाषा के ऐतिहासिक क्रम पर विचार करें, तो हिंदी विकासात्मक स्वरूप सामने आता है। दसवीं शताब्दी के पूर्व तक अपभ्रंश भाषा का प्रयोग होता था।

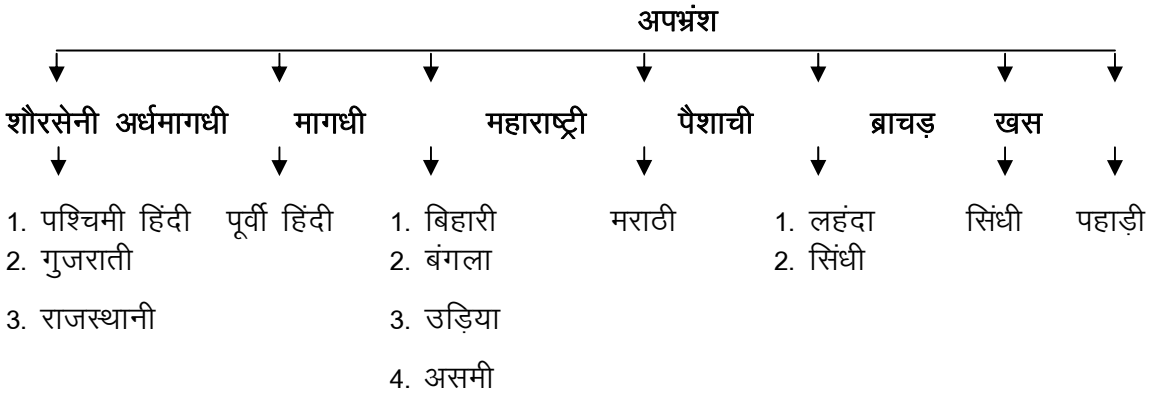

इस प्रकार स्पष्ट है कि शौरसेनी से 'पश्चिमी हिंदी' का उद्‌भव हुआ है, तो अर्ध मागधी से पूर्वी हिंदी का उद्‌भव हुआ है।

यदि हिंदी साहित्य की भाषा का ऐतिहासिक अध्ययन करें, तो ज्ञात होता है कि वीरगाथा काल की भाषा 'डिंगल–पिंगल' थी, भक्तिकाल की अवधी, व्रज, सधुक्कड़ी, राजस्थानी पुट की हिंदी थी। रीतिकाल की हिंदी ब्रज थी, तो आधुनिक काल में खड़ीबोली का विकास हुआ। वर्तमान समय में हिंदी या मानक हिंदी का प्रयोग हो रहा है।

तुलनात्मक पद्धति

तुलनात्मक भाषा अध्ययन में दो भाषाओं, दो भाषा के विशेष अंगों, दो रचनाओं आदि की विशेषताएँ सामने आती हैं। तुलनात्मक भाषा अध्ययन का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। इसमें दो भाषाओं, दो लिपियों, दो रचनाकारों की दो कृतियों का अध्ययन किया जा सकता है। एक भाषा के दो रचनाकारों, एक रचनाकार की दो कृतियों की भाषा का तुलनात्मक अध्ययन उन दो कृतियों की विशेषताओं को समझने में सहयोग होता है।

यदि तुलसीदासकृत 'रामचरितमानस' और मलिक मुहम्मद जायसी की 'मद्‌मावत' की भाषा की तुलना करें तो स्पष्ट रूप में यह तथ्य सामने आता है कि दोनों अवधी के महाकाव्य है, किंतु 'रामचरितमानस' साहित्यिक अवधी की रचना है। इसके प्रत्येक कांड के प्रारंभ में संस्कृत के श्लोकों को स्थान दिया गया है। पद्‌मावत अवधी के ठेठ रूप में रचित महाकाव्य है।

इसी प्रकार यदि 'नागरी लिपि' और 'रोमन' लिपि की तुलना करें, तो कुछ समानताओं के साथ अनेक भिन्नताएँ सामने आती है; यथा–

नागरी लिपि	रोमन लिपि
1. स्वरों एक साथ प्रारंभ में रखा गया है– अ–––ओ।	रोमन में व्यंजन के मध्य–मध्य– स्वर हैं।
2. नगरी में स्वरों की संख्या 11 है।	रोमन में स्वरों की संख्या 4 है।
3. नगरी में महाप्राण के लिए चिह्न हैं – ख, घ, छ आदि।	रोमन में महाप्राण चिह्न नहीं हैं।
4. नगरी में स्वर की मात्राओं की व्यवस्था है – ा, ि ी आदि।	रोमन में मात्रा नहीं है।
5. मात्रा प्रयोग से स्पष्टता है – तन, तना, तान, ताना।	समस्या है TANA ही चारों तन, तान, तना, ताना के लिए।
6. नागरी में 'ड.', ा, ण स्पष्ट नासिक्य चिह्न है।	ऐसे नासिक्य चिह्नों का अभाव है।

निश्चय ही तुलनात्मक भाषा अध्ययन से भाषा की विशेषताएँ सामने आती हैं और भाषा शिक्षण सरल हो जाता है।

1.7 सारांश

भाषा मनुष्य की विशेष उपलब्धि है। इसके आधार पर मनुष्य सामाजिक बनता है और जीवन में प्रगति करता है। यह भाषा अध्ययन का महत्त्व है। भाषा भावाभिव्यक्ति का साधन है। इस महत्त्व को देखकर भाषा का व्यवस्थित अध्ययन किया जाता है। यही भाषाविज्ञान है। भाषा व्यक्तिगत संपत्ति नहीं सामाजिक संपत्ति है। इसी प्रकार इसकी प्रवृत्तियों से मानवीय भाषा ही पहचान होती है। भाषा के क्षेत्र व्यक्ति की बोली से लेकर बोली, भाषा, राष्ट्रीय भाषा और अंतरराष्ट्रीय भाषा तक है। भाषा की संरचना में उसकी लघुतम इकाई ध्वनि से लेकर प्रोक्ति तक का अध्ययन करते हैं। जीवन के विभिन्न संदर्भों में प्रगति के लिए भाषा का आधार अनिवार्य है। भाषा का अध्ययन वर्णनात्मक, ऐतिहासिक और तुलनात्मक आदि कई पद्धतियों से करते हैं।

1.8 मुख्य शब्दार्थ

प्रवृत्ति – स्वाभाव, प्रकृति

संदिग्ध – असष्ट, संदेह

उद्देश्य – लक्ष्य, प्राप्ति–इच्छा

संरचना– विशेष रचना

महाप्राण ध्वनि –जिस ध्वनि के उच्चारण में अपेक्षाकृत अधिक वायु निकले।

1.9 स्वप्रगति परीक्षण

1. भाषा के सांकेतिक, उच्चरित, लिखित और कंप्यूटर आधार पर प्रयोग है।
2. भाषा के द्वारा अपने विचार दूसरों तक पहुँचाते हैं, दूसरों के विचार जान पाते हैं।

3. भाषा के संरचना में ध्वनि से लेकर प्रोक्ति तक ही इकाइयाँ होती हैं।
4. अर्थ भाषा की आत्मा के रूप में इसे देख–सुन नहीं सकते, अनुभव कर सकते हैं।
5. भाषा के सुसंगठित, क्रमबद्ध, व्यवस्थित अध्ययन को भाषाविज्ञान कहते हैं।

1.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. भाषा की परिभाषा लिखिए।
2. भाषा की प्रवृत्ति की परिचय दीजिए।
3. भाषा–व्यवस्था और व्यवहार की विवेचना कीजिए।
4. भाषा की संरचना का सोदाहरण परिचय दीजिए।
5. डॉ0 भोलानाथ तिवारी द्वारा की गई भाषा की परिभाषा लिखिए।
6. भाषा–अध्ययन के क्षेभ का परिचय दीजिए।
7. भाषा–अध्ययन की वर्णनात्मक पद्धति का सोदाहरण परिचय दीजिए।
8. भाषा–अध्ययन की ऐतिहासिक पद्धति का परिचय दीजिए।
9. भाषा–अध्ययन की तुलनात्मक पद्धति का सोदाहरण परिचय दीजिए।

1.11 पठनीय पुस्तकें

1. भाषा और हिंदी भाषा का इतिहास, डॉ0 नरेश मिश्र, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला, सन् 2006
2. भाषाविज्ञान और हिंदी भाषा – डॉ0 नरेश मिश्र, संजय प्रकाशन, दिल्ली, सन् 2016
3. भाषाविज्ञान और हिंदी – डॉ0 नरेश मिश्र, अभिनव प्रकाशन, दिल्ली, सन् 2014
4. भाषा और भाषाविज्ञान – डॉ0 हरिश्चंद्र वर्मा, लक्ष्मी पब्लिसिंग हाउस, रोहतक, सन् 2006
5. भाषाविज्ञान– डॉ0 भोलानाथ तिवारी, किताब महल, इलाहाबाद, सन् 2005
6. हिंदी : उद्‌भव, विकास और रूप, डॉ0 हरदेव बाहरी, किताब महल, इलाहाबाद, सन् 1980
7. भाषा और भाषिकी, डॉ0 देवी शंकर द्विवेदी, प्रशांत प्रकाशन, कुरुक्षेत्र, सन् 1974
8. सामान्य भाषाविज्ञान, डॉ0 बाबूराम सक्सेना, सुलभ साहित्यमाला, प्रयाग, सन् 1983

इकाई 2 स्वनविज्ञान

इकाई की रूपरेखा

2.0 परिचय

2.1 इकाई के उद्देश्य

2.2 वाग्यं (ध्वनि–यंत्र) तथा ध्वनि–उत्पादन प्रक्रिया

2.2.1 वाग्यंत्र (ध्वनि यंत्र)

2.2.2 ध्वनि उत्पादन प्रक्रिया

2.3 स्वन : परिभाषा और वर्गीकरण

2.4 स्वनगुण और उसकी सार्थकता

2.5 स्वनिक परिवर्तन की दिशाएँ

2.6 स्वनिम : स्वरूप और वर्गीकरण

2.7 सारांश

2.8 मुख्य शब्दार्थ

2.9 स्वप्रगति परीक्षण

2.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.11 पठनीय पुस्तकें

2.0 परिचय

स्वन का अर्थ है – ध्वनि। भाषा की लघुतम, स्वतंत्र और महत्त्व इकाई ध्वनि है। ध्वनि को भाषा की आधार इकाई कहते हैं, क्योंकि इसके ही आधार पर भाषा की वृहत्तर इकाइयों का निर्माण होता है। भाषाविज्ञान में मानव मुखोच्चरित ध्वनि का अध्ययन किया जाता है। मनुष्य साँस लेता है और साँस निकालता है। भाषा की ध्वनियों का उच्चारण फेफड़े से बाहर हाने वाली निःश्वास की वायु से ही होता है। फेफड़े से चली वायु स्वरयंत्र की झिल्लियों को पार कर मुख के विभिन्न अंगों से होती हुई बाहर आती है। इस प्रकार ध्वनियों का उच्चारण होता है। इस इकाई में भाषा की विभिन्न ध्वनियों के साथ ध्वनि–उत्पादक अंगों और ध्वनि–उत्पादन प्रक्रिया पर विचार किया जाएगा।

2.1 इकाई के उद्देश्य

- स्वन (ध्वनि) की परिभाषा, उनके स्वरूप के साथ उनका वर्गीकरण करना।
- ध्वनि उत्पादन में शरीर के सहयोगी अंगों का परिचय और उनकी भूमिका का अध्ययन।
- ध्वनि –उत्पादन कैसे होता है? ध्वनि–उत्पादन प्रक्रिया समझना।

- स्वन में होने वाले विभिन्न परिवर्तनों का परिचय कराना।
- स्वनिम का स्वरूप और उनके विविध रूपों का परिचय कराना।

2.7 सारांश

ध्वनि में ध्वनन का बोध होता है। ध्वनि के संदर्भ में ध्वनि–उत्पादन, ध्वनि–संवाहक और ध्वनि–संग्राहक का तथ्य सामने आता है। भाषाविज्ञान में मानव मुखोच्चरित ध्वनि का अध्ययन किया जाता है। प्रत्येक भाषा में स्वर और व्यंजन ध्वनियाँ होती हैं। ध्वनि उत्पादन में ध्वनि उत्पादक व्यक्ति के मन, बुद्धि और भाषा–ज्ञान के उपयुक्त समन्वय से सुंदर भाषा के प्रयोग में ध्वनि का शुद्ध रूप होता है। लिखे हुए शब्द या वाक्य को यदि मात्रा, बलाघात और सुराघात बदलकर बोला जाए, तो अर्थ–परिवर्तन होता है। यह भाषा और भाषा–प्रयोक्ता की विशेषता बन जाती है। भाषा प्रयोक्ता के लिए शुद्ध उच्चारण उसकी श्रेष्ठता सिद्ध करती है।

2.8 मुख्य शब्दार्थ

- ध्वनि–उत्पादक – उच्चारण करने वाला, बोलने वाला।
- ध्वनि–संवाहक – ध्वनि–तरंग को श्रोता या कर्ण तक ले जाने वाला माध्यम; यथा–वायु।
- ध्वनि–संग्राहक – सुनने वाला, कान, श्रवणेंद्रिय।
- मूर्द्धा – मुखगुहा का ऊपरी शीर्ष भाग।
- नसिका – नाक
- नासिवय– नाक से निकलने वाली ध्वनि; यथा – ङ्, ञ्, ण्, न, म्।
- मौखिक ध्वनि – जिन ध्वनियों के उच्चारण में निःश्वास की वायु मुख से बाहर आती है।

2.9 स्वप्रगति परीक्षण

1. ध्वनियों का उत्पादन – विभिन्न ध्वनि उत्पादक अंगों से होता है।
2. ध्वनि–उत्पादन का सर्व प्रमुख अंग स्वर–यंत्र है।
3. तालव्य ध्वनियों का उत्पादन जीभ के तालु के स्पर्श पर वायु बाहर आने से होता है।
4. ओष्ठ्य ध्वनियों का उत्पादन दोनों होंठों के आपस में मिलने और फिर खुलने से होता है।
5. नासिक्य ङ्, ञ्, ण्, न, म् ध्वनियों के उच्चारण में निःश्वास की वायु नाक से बाहर आती है।
6. अनुनासिक ध्वनियों के उच्चारण में निःश्वास की वायु मुख के साथ नाक से भी निकलती है।
7. 'ह्' ध्वनि का उच्चारण स्वरयंत्र के पास से होने के आधार पर स्वरयंत्रमुखी व्यंजन कहा जाता है।

2.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. ध्वनि उत्पादक वाग्यंगों का सचित्र परिचय दीजिए।
2. ध्वनि–उत्पादन प्रक्रिया का विवेचन कीजिए।
3. हिंदी स्वर ध्वनियों का वर्गीकरण कीजिए।
4. व्यंजन की परिभाषा देकर उनका वर्गीकरण कीजिए।

5. स्वनगुण की परिभाषा देते हुए इनके भेदों का सोदहरण परिचय दीजिए।
6. स्वनिक परिवर्तन की दिशाओं का सोदाहरण परिचय दीजिए।
7. स्वनिम को परिभाषित करते हुए वर्गीकरण कीजिए।

2.11 पठनीय पुस्तकें

1. भाषा और हिंदी भाषा का इतिहास, डॉ0 नरेश मिश्र, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला, सन् 2006
2. भाषाविज्ञान और हिंदी भाषा, डॉ0 नरेश मिश्र, अभिनव प्रकाशन, दिल्ली, सन् 2014
3. भाषाविज्ञान, डॉ0 भोलानाथ तिवारी, किताब महल, इलाहाबाद, सन् 2005
4. सामान्य भाषा–विज्ञान, डॉ0 बाबूराम सक्सेना, हिंदी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, सन् 1883
5. हिंदी : उद्‌भव विकास और रूप, डॉ0 हरदेव बाहरी, किताब महल, इलाहाबाद, सन् 1980
6. भाषाविज्ञान और हिंदी भाषा, डॉ0 नरेश मिश्र, संजय प्रकाशन, दिल्ली, सन् 2016
7. भाषाविज्ञान और हिंदी, डॉ0 हरिश्चंद्र वर्मा, लक्ष्मी पब्लिशिंग हाउस, रोहतक, सन् 2006
8. भाषा और भाषिकी, डॉ0 देवीशंकर द्विवेदी, प्रशांत प्रकाशन, कुरूक्षेत्र, सन् 1974

इकाई 3 रूपविज्ञान एवं वाक्य विज्ञान

इकाई की रूपरेखा

3.0 परिचय

3.1 इकाई के उद्देश्य

3.2 शब्द और रूप (पद)

3.3 संबंध तत्त्व और अर्थ तत्त्व

3.4 रूप, संरूप और रूपिम का स्वरूप

3.5 रूपियों का वर्गीकरण

3.6 भाषा की इकाई के रूप में वाक्य

3.7 अभिहितान्वयवाद और अन्विताभिधानवाद

3.8 वाक्य के प्रकार

3.8.1 संरचना की दृष्टि से

3.8.2 अर्थ की दृष्टि से

3.9 वाक्य को गहन संरचना और बाह्य संरचना

3.10 सारांश

3.11 मुख्य शब्दार्थ

3.12 स्वप्रगति परीक्षण

3.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.14 पठनीय पुस्तकें

3.0 परिचय

भाषा की संरचना में विभिन्न इकाइयों का अपना महत्त्व होता है। उनमें से किसी एक इकाई के अभाव में भाषा का स्वरूप ही संदिग्ध हो सकता है। जिस प्रकार मानव शरीर में बुद्धि, हृदय, मन और अन्य अंगों की अपनी भूमिका है। इस संदर्भ में भाषा के शब्द, पद और वाक्य इकाइयों का अध्ययन किया जाएगा। शब्द भाषा की सार्थक महत्त्वपूर्ण इकाई है। संस्कृत में 'शब्द–ब्रह्म' कहा जाता है, क्योंकि शब्द को भाषा के अर्थ में लिया जाता है। व्याकरण के अनुसार शब्द को सार्थक और निरर्थक दो वर्ग में विभक्त करते हैं, जबकि व्यवहार और प्रयोगात्मक तथ्यों पर आधारित भाषाविज्ञान में शब्द की सार्थकता अनिवार्य है।

शब्द से वृहत्तर इकाई पद है। जब शब्द में वाक्य बनाने की क्षमता आ जाती है, उसे पद कहते हैं। दूसरे शब्दों में जब शब्द में व्याकरणिक योग्यता विकसित हो जाए, तो पद बन जाता है। वाक्य भाषा की पूर्ण सार्कक और महत्त्वपूर्ण इकाई है। इस प्रकार शब्द, पद के आधार पर बनी वाक्य इकाई से पूर्ण अर्थ प्रकट करने के लिए वाक्य का प्रयोग किया जाता है।

3.1 इकाई के उद्देश्य

भाषा शिक्षण में जब ध्वनि और वर्ण की पूर्ण पहचान हो जाती है, तो इसके पश्चात् वृहत्तर इकाई जो ध्वनि और वर्णों से बनी है, शब्द का अध्यन किया जाता है। शब्द की सार्थकता के आधार पर भाव–संप्रेषण का श्रीगणेश हो जाता है। शब्द का अर्थ से अभिन्न संबंध है। इसलिए शब्द अध्ययन से भाषा की पकड़ शुरू हो जाती है। जब पद् या रूप का ज्ञान हो जाता है, तो भाषा प्रयोग का प्रथम चरण सामने आ जाता है। जैसे बच्चा खड़ा होने लगता है, तो चल सकने की आशा जग जाती है; यह भाषा में शब्द–ज्ञान की स्थिति है। जब बच्चा एक कदम आगे बढ़ा लेता है, तो विश्वास हो जाता है कि वह चलने की शक्ति सजो रहा है। इसी प्रकार भाषा–अध्ययन में पद या रूप का अर्थ है कि शब्द में व्याकरणिक योग्यता आ गई है अर्थात् वाक्य बनने की क्षमता आ गई। इसके बाद एकाधिक पद आगे बढ़ कर बच्चा चलना सीख लेता है। भाषा प्रयोक्ता एकाधिक पदों का समुचित प्रयोग कर वाक्य बनाना है और अपने भाव और विचार की पूर्ण अभिव्यक्ति करता है। इस इकाई में भावाभिव्यक्ति संदर्भ में वाक्य रचना तक ज्ञान करना उद्देश्य है।

3.2 शब्द और रूप (पद)

शब्द और रूप (पद) भाषा की महत्त्वपूर्ण इकाइयाँ हैं। शब्द यदि भाषा की सार्थक इकाई है, तो पद उससे वृहत्तर इकाई है। संस्कृत काल में शब्द को विशेष महत्त्व दिया जाता रहा है। शब्द को 'ब्रह्म' की संज्ञा दी जाती थी। पहले कहा जाता था कि कोई शब्द कर रहा है, तो इसका अर्थ भाषा होता था।

भाषा के गंभीर अध्ययन से शब्द और रूप (पद) के स्वरूप की भिन्नता सामने आई है। शब्द भाषा की लघुतम, स्वतंत्र, महत्त्वपूर्ण सार्थक इकाई है। इसकी सार्थकता अनिवार्य है। रूप निश्चय ही शब्द के आधार पर निर्मित भाषायी इकाई है, किंतु यह शब्द से बड़ी इकाई है। शब्द में जब व्याकरणिक योग्यता आ जाती है, तो उसे रूप मी संज्ञा दी जाती है। इसे दूसरी तरह कह सकते हैं– जब शब्द में वाक्य बनाने की क्षमता आ जाए, तो उसे रूप (पद) की संज्ञा दी जाती है; यथा–

शब्द	**पद**
श्याम, विजय, मधुर	श्याम ने, विजय को, मधुर से

कभी–कभी शब्द वाक्य में अपने मूल रूप में ही प्रयुक्त होता है। उसमें कोई परिवर्तन होता ही नहीं है। यह हमें समझ लेना चाहिए कि यदि शब्द वाक्य में बिना किसी रूप परिवर्तन के प्रयुक्त हो गया, तो वह भी निश्चय ही वाक्य का एक पद बन गया है; यथा–

शब्द	**पद रूप (वाक्य में प्रयोग)**
नीलम	नीलम घर जा रही है।

यहाँ 'नीलम' शब्द वाक्य में अपरिवर्तित रूप में वाक्य में प्रयुक्त है। इसलिए वाक्य में नीलम संज्ञा पद है।

संस्कृत श्लेषात्मक भाषा है। इसलिए संस्कृत में पद रूप एक शिरोरेखा में श्लेष रूप में लिखते हैं। हिंदी वियोगात्मक भाषा है। इसलिए हिंदी के अधिकांश पद में वियोगात्मक रूप होता है, अर्थात् कारक चिह्न और सहायक क्रियाएं प्रायः वियोगात्मक रूप में लिखी जाती है; यथा–

संस्कृत	**हिंदी**
वृक्षात् पत्राणि पतन्ति	वृक्ष से पत्ते गिरते हें।

यहाँ देख सकते हैं कि 'वृक्षात्' संस्कृत का पद है, जिसे हिंदी में 'वृक्ष से' पद को वियोगात्मक रूप में लिखा

गया है। इसी प्रकार संस्कृत में क्रियापद है– 'पतन्ति' जिसका हिंदी में 'गिरता है' वियोगात्मक अर्थात् मूल क्रिया 'गिरता' (गिरता) में सहायक क्रिया 'है' (होना) को अलग लिखा गया है।

हिंदी भाषा के शब्द और रूप के स्पष्ट ज्ञान के लिए संस्कृत के रूप और धातु के विविध विभक्तियों और पुरुषों के लिए प्रयोग रूप से तुलना करते हुए देख सकते हैं। संस्कृत सुबंध (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण) शब्द रूप से पद निर्माण के लिए सुप् प्रत्यय का साथ–साथ प्रयोग किया जाता है; यथा–

बालक

प्रथम	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
	बालकः	बालकौ	बालकाः
सप्तमी	बालके	बालकयोः	बालकेषु

यहाँ प्रथम पंक्ति में :, औ, आः का प्रयोग किया गया है, तो अंतिम सप्तमी में – ए, योः, एषु का शब्द के साथ प्रयोग किया गया है।

हिंदी पद रचना इसी संदर्भ से स्पष्ट की जा सकती है–

बालक

	एकवचन	**बहुवचन**
प्रथमा	बालक ने	बालकों ने
सप्तमी	बालक में/पर	बालकों में/बालकों पर

इसी प्रकार हिंदी क्रियापद की रचना में शब्द के व्याकरणिक रूप को संस्कृत से तुलना कर देख सकते है–

संस्कृत तिङ्त धातु रूप

पठ् धातु

वर्तमान काल लट लकार

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पठति	पठतः	पठन्ति
मध्यम पुरुष	पठसि	पठथः	पठथ
ऊत्तम पुरुष	पठामि	पठावः	पथामः

यहाँ पठ् से पद (रूप) बनाने के लिए – ति, तः, अन्ति; सि, थः, थ; मि, वः मः आदि प्रत्ययों का योग किया गया है। यह स्पष्ट है कि प्रत्यय शब्द के साथ प्रयुक्त होते हैं और उसी नियम से यहाँ प्रयुक्त हुए हैं।

हिंदी क्रिया पद में क्रिया शब्द से क्रिया शब्द से क्रिया रूप (पद) निर्माण का वियोगात्मक रूप अवलोकनीय है।

वर्तमान काल

(पठ धातु) पढ़ना क्रिया

	एकवचन	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	पढ़ता हूँ	पढ़ते हैं
मध्यम पुरुष	पढ़ते हो (पढ़ते हैं)	पढ़ते हो (पढ़ते हैं)
अन्य पुरुष	पढ़ता है	पढ़ते हैं।

यह 'पढ़ना' क्रिया शब्द से क्रिया पद निर्माण में वियोगात्मक रूप स्पष्ट रूप से सामने आता है। इसे वाक्य में प्रयोग कर अनुभव कर सकते हैं –

(मैं) पढ़ता हूँ।	(हम) पढ़ते हैं।
(तुम) पढ़ते हो।	(तुम सब) पढ़ते हो।
(आप) पढ़ते हैं।	(आप सब) पढ़ते हैं।
(वह) पढ़ता है।	(वे) पढ़ते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि शब्द भाषा की सार्थक इकाई है और पद व्याकरणिक योग्यता प्राप्त शब्द से वृहत्तर इकाई है। इसकी रचना में हिंदी भाषा की वियोगात्मक प्रवृत्ति सामने आती है।

3.3 संबंध तत्त्व और अर्थ तत्त्व

भाषा संरचना में ध्वनि लघुतम और आधार इकाई है। इसे जब लिखित लघुतम इकाई का रूप मिलता है, तो उसे वर्ण कहते हैं। ध्वनियों के समूह या कहे जब दो या दो से अधिक ध्वनियों का सार्थक रूप में प्रयोग होता है, तो शब्द की संरचना होती है।

शब्द को जब व्याकरणिक योग्यता मिल जाती है, तो पद बन जाता है। इसे रूप की भी संज्ञा दी जाती है। अंग्रेजी में उसके अध्ययन Morphology कहते हैं। हिंदी में पदविज्ञान या रूपविज्ञान कहते हैं। इसमें शब्द के उस रूप का अध्ययन किया जाता है, जिसमें वाक्य बनाने की क्षमता आ जाती है। हिंदी भाषा में अयोगात्मक स्थिति में शब्द और पद में एक रूपता होती है अर्थात् अर्थ तत्त्व ही होता है, संबंध तत्त्व नहीं होता। ऐसे में शब्द जब वाक्य में प्रयुक्त हो जाए, तो पद बन जाता है; यथा – 'आम' हिंदी का एक शब्द है। इसे जब वाक्य में प्रयोग करते हैं, तो पद बन जाता है। इस प्रकार शब्द से पद बनने में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता है – 'आम मीठा है।' यहा 'आम' एक पद है, जो वाक्य में कर्ता के रूप में प्रयुक्त है। 'आम' पद का वाक्य के अन्य शब्दों से संबंध स्पष्ट हो जाता है। यदि आम शब्द किसी अन्य स्थान पर प्रयुक्त होगा, तो पद भी भिन्न हो होगा; यथा–

"आनन्द आम खाता है।"

इस वाक्य में 'आम' पद है, जो स्वतंत्र रूप में शब्द था, वाक्य में प्रयुक्त होने पर पद बन गया। 'बालकः' एक शब्द है। यह वाक्य में प्रयुक्त होने पर पद बन गया है; यथा' "बालकः विद्यालयं गच्छति।" इस वाक्य में 'विद्यालय' और 'गच्छति' दो अन्य पद हैं। संस्कृत में पदक्रम की विशेष व्यवस्था न होने से इसे कई रूपों में लिख सकते हैं; यथा–

बालकः विद्यालयं गच्छति।

विद्यालयं गच्छति बालकः।

गच्छति विद्यालयं बालकः।

इस प्रकार वाक्य में संबंध तत्त्व और अर्थतत्त्व का अध्ययन ही पदविज्ञान है। "राम ने रावण को बाण से मारा।" इस वाक्य में राम, रावण, बाण और मारना अर्थ तत्त्व हैं। इनमें से तीन के साथ क्रमशः ने, की, को, से जुड़कर और मारना से मारा होकर 'राम ने', 'रावण को', 'बाण से', 'मारा' चार पद बने हैं।

संस्कृत में सुबन्त (संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण) शब्दों को पद बनाने के लिए सुप् प्रत्यय (:, औ, आः..... ए, योः, एषु) का सहयोग लेते हैं, जो कर्ता, करण आदि कारकों तथा एकवचन, द्विवचन, बहुवचन का संकेत करते हैं; यथा–

बालकः	बालकौ बालकाः	
———	———— ————	
बलके	बालकयोः	बालकेषु

हिंदी भाषा में सुप् प्रत्यय के स्थान स्वतंत्र कारक चिन्हों– ने, को, से, का, के, की, पर आदि का प्रयोग होता है।

संस्कृत में तिङन्त धातुओं के साथ तिङ्–ति, तः, अन्ति, सि, थः, मि, वः, मः आदि प्रत्यय लगते हैं।

पठति	पठतः	पठन्ति
पठसि	पठथः	पठथ
पठामि	पठावः	पठामः

इनमें एकवचन, द्विवचन, बहुवचन रूप बनते हैं। हिंदी में कालद्योतक प्रत्ययों ता, ती, ते, हूँ, हैं, गा, गे, गी आदि का प्रयोग होता है।

कुछ भाषाओं में संबंध तत्त्व अलग से प्रयुक्त नहीं हाते हैं वरन् शब्दों के स्थान परिवर्तन से ही उनकी भावपूर्ति हो जाती है। 'चीनी' स्थान प्रधान भाषा है; उदाहरणार्थ

न्गो	त	नि	– मैं तुम्हें मारता हूँ।
नि	त	न्गो	– तुम मुझे मारते हो।

अंग्रेजी में भी ऐसे उदाहरण मिल जाते हैं –

Ratan Killed Mahendra

(क) अर्थ–तत्त्व के साथ प्रयुक्त संबंध–तत्त्व के प्रकार – प्रायः सभी भाषाओं के संबंध तत्त्वों में भिन्नता होती है। इनके प्रमुख रूप इस प्रकार हैं–

1. **शून्य संबंध–तत्त्व** – जब शब्द को वाक्य में बिना संबंध–तत्त्व लगाए उसे मूल रूप में प्रयुक्त किया जाए, तो उसे शून्य संबंध–तत्त्व कहते हैं। हिंदी में आज्ञार्थक क्रियापद इसी प्रकार के हाते हैं; यथा–आ, जा, उठ, बैठ आदि। संस्कृत में कुछ शब्दों में प्रथमा एकवचन के रूप भी इसी प्रकार के होते हैं; यथा–वारि, मधु, जगत, आदि। अंग्रेजी के दोनों वचनों में Sheep (भेड़, भेड़े) Deer (मृग) आदि का ही प्रयोग होता है। I go, You go, They go में go का प्रयोग शून्य संबंध तत्त्व के रूप में हुआ है।

2. **स्वतंत्र शब्द–संबंध–तत्त्व** – अधिकांश भाषाओं के वाक्यों में प्रयुक्त स्वतंत्र शब्द ही वाक्य में विभिन्न पदों के पारस्परिक संबंध का बोध कराते हैं। हिंदी के समस्त कारक चिह्न (ने, को, का, के, पर आदि) इसी प्रकार के हैं। अंग्रेजी के to, in, on, form, with और संस्कृत के इति, अपि, च आदि इसी प्रकार के संबंध तत्त्व है।

यदा–कदा दो शब्दों के एक साथ, किंतु भिन्न–भिन्न स्थान पर प्रयुक्त होने वाले संबंध–तत्त्वों के रूप दिखाई देते हैं; यथा– हिंदी में – यदि .....तो....., जब.....तब....., जैसे .....तैसे....., आदि। संस्कृत में – यदि .....तर्हि....., यत्र.....तत्र..... आदि।

3. **ध्वनि–परिवर्तन** – पद व्यवस्था में यदा–कदा स्वर परिवर्तित हो जाते हैं; **(क) स्वर–परिवर्तन** – पद व्यवस्था में यदा–कदा स्वर परिवर्तित हो जाते हैं; यथा–लिखना > लिखाना, पढ़ना > पढ़ाना, मामा > मामी आदि। संस्कृत में देव > दैव, पुत्र > पौत्र, सुत > सुता रूप होते हैं, जो अंग्रेजी में Come > Came, Man > Men, Run > Ran रूप हो जाते हैं।

(ख) व्यंजन–परिवर्तन – इस प्रक्रिया में कभी–कभी व्यंजन में परिवर्तन होता है; यथा–जा > गया, भु > भोग्य।

(ग) स्वर–व्यंजन–परिवर्तन – कभी–कभी स्वर तथा व्यंजन दोनों ध्वनियों में एक साथ परिवर्तन होता है; यथा– भज् (सेवा करना) > अभक्त (सेवा की), पच् (पकाना) > अपक्त (पकाया), लिख > लिखवाया, संस्कृत में– गम् >गच्छति, अंग्रेजी में – go > went, gone आदि।

4. **द्विरुक्ति –** विभिन्न भाषाओं में संबंध तत्त्व के कार्य हेतु कुछ ध्वनियों तथा शब्दों की आवृत्ति की जाती है, इसे द्विरुक्ति या द्विरावृत्ति (Reduplication) कहते हैं; यथा–चुर चुरचुराना, फट > फटफटाना, बार > बार–बार, बात > बात–बात, घर > घर–घर आदि। संस्कृत में पठ् (पढ़ना) > पपाठ (पढ़ा), दृश् (देखना) > ददर्श (देखा) आदि।

5. **ध्वनि–आगम–** पद–निर्माण प्रक्रिया में आदि, मध्य अथवा अंत में कुछ ध्वनियाँ संबंध तत्त्व के रूप में जुड़ जाती हैं, उन्हें आगम–स्थान के आधार पर तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं।

(क) **आदि–सर्ग (Prefix)** – इसे पूर्व सर्ग भी करते हैं। इस प्रक्रिया में ध्वनि शब्द के आदि में जुड़ती है। इसमें अर्थ–परिवर्तन को संभावना होती है; यथा–हार > प्रहार, आहार, बिहार, मनुहार आदि। अंग्रेजी में Port> Import, Export; Receive (पाना) Deceive (धोखा देना)। संस्कृत में पठ् (पढ़ना), अपठत (पढ़ा), लिख् (लिखना) अलिखत (लिखा) आदि।

(ख) **मध्य–सर्ग** – इस प्रक्रिया को विकरण की संज्ञा दी जाती है। इसमें ध्वनि का आगम शब्द के मध्य भाग में होता है; यथा– लिखा > लिखाना, लिखवाना, गिरना > गिराना आदि। संस्कृत में – पठ > पाठयति, पठ् > पठति आदि।

(ग) **अंत–सर्ग (Suffix)** – इसे विभक्ति या प्रत्यय भी कहा जाता है। इसमें ध्वनि–आगम शब्द के अंतिम भाग में होता है; यथा– संदीप > संदीप ने, संदीप से आदि। लेख > लिखना है, लिखेगा, लिखा था आदि। अंग्रेजी में वचन के अनुसार – Boy>Boys काल के अनुसार Talk> Talked, go > going संस्कृत में पठ > पठति, पठतः, पठन्ति आदि। राम > रामः, रामौ, रामाः आदि।

संबंध–तत्त्व और अर्थ–तत्त्व में संबंध

सभी भाषाओं के दो तत्त्वों में पर्याप्त भिन्नता होती है, इनके संबंधों पर स्वतंत्र रूप में इस प्रकार विचार कर सकते हैं –

(क) पूर्ण संयोग – कुछ भाषाओं में ये संबंध–तत्त्व इस प्रकार आपस में मिले होते हैं कि दोनों एक ही साथ प्रकट होते हैं। अरबी में कत्ल में स्वर या व्यंजन के संयोग से ऐसी रचना होती है, यथा– काल > कातिल, कतल आदि शून्य संबंध–तत्त्व वाले रूप इसी श्रेणी में माने जा सकते हैं।

(ख) अपूर्ण–संयोग – जब संबंध तथा अर्थ–तत्त्व आपस में मिले रहने पर भी अलग–अलग रूपों में दिखाई पड़ते हैं। अंग्रेजी की भूतकालिक क्रियाएँ ऐसी ही मिलती हैं। kill> killed, talk>talked, ask>asked आदि। हिंदी में भी ऐसा प्रयोग पर्याप्त संख्या में मिलते हैं; यथा–सफल > सफलता, हरी > हरीतिमा, स्वर्ण > स्वर्णिम, बुद्धत्त्व आदि।

(ग) स्वतंत्र रूप – कुछ भाषाओं में दोनों तत्त्व स्वतंत्र रूप में रहते हैं। भारोपीय परिवार की भाषाओं में प्रयुक्त ने, को, से आदि इसी प्रकार के तत्त्व हैं; यथा– श्याम ने, श्याम को, श्याम से।

संबंध–तत्त्व और उनके कार्य–

प्रत्येक भाषा में संबंध तत्त्वों की अपनी विशेषताएँ होती हैं। हिंदी में स्वतंत्र संबंध–तत्त्वों की प्रधानता है। हिंदी में संबंध–तत्त्वों के द्वारा मुख्यतः काल, लिंग, पुरुष वचन तथा कारक आदि की अभिव्यक्ति होती है।

(क) काल– वर्तमान, भूत तथा भविष्यत कालों की क्रियाओं में सबंध तत्त्व का योग से भेद अथवा उपभेद की सूक्ष्मता प्रकट होती है; यथा– खाना > खा > खाया, रोना >रो >रोया आदि। अंग्रेजी में talk> talked, walk > walked आदि।

(ख) लिंग–भाषा के विभिन्न लिंगों के रूपों का परिवर्तन भी संबंध–तत्त्वों के आधार पर किया जाता है। हिंदी में स्त्रीलिंग तथा पुल्लिंग दो ही रूप हैं, हिंदी में लिंग–परिवर्तन की दो विधियाँ हैं–

(1) प्रत्यय आधार – प्रत्यय के आधार पर लिंग परिवर्तन किया जाता है; यथा– घोड़ा > घोड़ी, कुत्ता >कुतिया, नर >नारी आदि।

(2) स्वतंत्र शब्दाधार– कभी–कभी स्वतंत्र शब्द का सहारा लेते हैं; यथा– माता > पिता, राजा > रानी, स्त्री > पुरुष, वर > वधु आदि।

(ग) पुरुष– वाक्य या पद में उत्तम, मध्यम और अन्य पुरुषों के आधार पर क्रिया के रूप होते हैं। इस प्रकार के रूप परिवर्तन में स्वर अथवा व्यंजन या दोनों का ही सहारा लेना पड़ता है। कभी–कभी विभक्ति में परिवर्तन करते हैं; यथा–पठ् से प्रथम पुरुष–पठ् > पठति..... मध्यम पुरुष–पठ् > पठसि.....। उत्तम पुरुष–पठ् > पठामि..... ...।

वचन–संस्कृत में तीन वचनों की व्यवस्था है, तो हिंदी–अंग्रेजी में दो वचनों की। वचन–परिवर्तन में संबध–तत्त्वों का सहारा लेते हैं। अंग्रेजी में कभी S, तो कभी es का प्रयोग होता है; Boy > Boys; यथा– धोती > धोतियाँ, लड़का > लड़के, घोड़ा > घोड़ों। हिंदी में बहुवचन बनाने के लिए इयाँ, ए, एँ, ओं आदि का प्रयोग किया जाता है।

3.4 रूप, संरूप और रूपिम का स्वरूप

(अ) रूप

संस्कृत के सुप् और तिङ् प्रत्यय युक्त भाषिक इकाई को रूप की संज्ञा दी जाती है। सुप् अंत वाले रूप संज्ञा और सर्वनाम के कारकीय रूप हाते है और तिङ् अंतवाले क्रिया के रूप होते हैं। रूप अर्थ प्रकट करने वाली प्रारंभिक इकाई है। स्वनिम के माध्यम से रूप की पहचान होती है, क्योंकि रूप स्वनिम पर आधारित होता है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि रूप की आकृति स्वनिममय ही होती है। इस प्रकार कह सकते हैं कि स्वनिम और अर्थ को मिलाने वाली महत्त्वपूर्ण इकाई रूप है; यथा–लता > लताएँ, प्रभात > प्रभात पर आदि।

रूप के द्वारा दो कार्यों का संपादन होता है। प्रथम विभिन्न स्वनिमों को अर्थ–संदर्भ में एक साथ प्रयोग का निर्धारण करना और द्वितीय स्वनिम समुदाय के विभिन्न स्वनिमों में संबंध स्थापित करना। इस प्रकार रूप की संरचना संभव होती है।

परिभाषा

रूप को सरल ढंग से इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं – "भाषा की लघुतम महत्त्वपूर्ण इकाई को स्वनिम समुदाय को सार्थक स्वरूप प्रदान करती है, उसे रूप कहते हैं।"

डॉ0 बाबूराम सक्सेना के रूप को परिभाषित करते हुए लिखा है, "रूप भाषा की वह छोटी से छोटी अर्थवती इकाई है, जो अपने आकार रूप, स्वनिम–समुदाय की अभिव्यक्ति की संघटना से जोड़ती है।"

हिंदी में कुछ ऐसी स्थितियाँ आती है, जब स्वनिम–समुदाय ही नहीं, स्वनिम का अभाव होने पर भी रूप की स्थिति होती है; जैसे– ममता घर जा रही है।' वाक्य में 'ममता' और 'घर' के साथ कोई प्रत्यय नहीं लगा है। स्वनिम विहीन होने पर भी 'ममता' और 'घर' के साथ कर्नृ और कर्म संबंध तत्त्वों का बोध होता है। यहाँ शून्य प्रत्यय की कल्पना की जाती है। ऐसा मानना व्यवहारिक रूप से उपयोगी है। रूप रचना में स्वर, व्यंजन या मात्रा का प्रयोग संभावित होता है।

रूप का वर्गीकरण कई आधारों पर किया जा सकता है। प्रथम वर्गीकरण है – रूप का प्रयोग– क्रम आधार। इसमें विभिन्न रूपों को उनके प्रयोग क्रम को आधार बनाकर वर्गीकरण करते है; यथा– उपसर्ग, मध्यसर्ग और प्रत्यय को क्रमशः भिन्न–भिन्न वर्ग में व्यवस्थित करते हैं।

रूप का द्वितीय वर्गीकरण अनुक्रमात्मक वर्गीकरण है। इसमें विभिन्न रूपों के वर्गों के अनुक्रम में प्रयोग आधार पर वर्गीकरण करते हैं। अर्थात् जिस प्रकार के रूप जिसके बाद प्रयुक्त होते हैं, इस आधार पर वर्गीकरण करते हैं; यथा– प्रांतिपादिक वर्ग पहले आता है, तो सुप् वर्ग बाद में आता है। तिङ् वर्ग ऐसा वर्ग है, जो धातु के बाद प्रयुक्त होता है।

रूप का तृतीय वर्गीकरण उसके संयोगात्मक और वियोगात्मक रूपों को दृष्टिगत कर किया जा सकता है; यथा– हिंदी के कुछ क्रिया विशेषण के दोनों प्रकार के रूपों को इस प्रकार व्यवस्थित कर सकते हैं–

एक – धीमा > धीमे, अनजाना > अनजाने, नीचा > नीचे

बेखटका > बेखटके, सबेरा > सबेरे, बदला > बदले

कर – रोना > रोकर, हँसना > हँसकर, पढ़ना > पढ़कर

तः – अंत > अंततः, अंश > अंशतः, मुख्य > मुख्यतः

न – जबर >जबरन, कानून > कानूनन, मजबूर >मजबूरन

अयोगयात्मक रूप

का – सुबह > सुबह का, शाम > शाम का, रात > रात का

तक – आज > आज तक, नदी > नदी तक, शहर > शहर तक

पर – मेज > मेज पर, पेड़ > पेड़ पर, छत > छत पर

भर – जी > जी भर, पेट > पेट भर, दिन > दिन भर

में – घर > घर में, हाथ > हाथ में, संस्था > संस्था में

रूप को प्रायः पद के समानार्थक रूप में प्रयोग किया जाता है, किंतु दोनों में सूक्ष्म भेद है। पद में भीतरी उपादान तत्त्वों के आपसी संबंध का ज्ञान रूप कराता है। संरचनात्मक ज्ञान रूप के माध्यम से होता है। प्रयोग की दृष्टि से पद अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट महत्त्वपूर्ण इकाई है।

इस प्रकार स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि रूप भाषा की संरचनात्मक आंतरिक व्यवस्था है, जो पद भाषा की प्रयोगात्मक बाह्य व्यवस्था है।

(ब) संरूप

जिस प्रकार स्वनिम के विभिन्न रूपों को संस्वन कहते हैं। इसी प्रकार रूपिम के विभिन्न रूपों को संरूप की संज्ञा दी जाती है।

रूप परिवर्तन व्याकरण की विभिन्न कोटियों के आधार पर होते हैं। भाषा की प्रमुख व्याकर्णाणक कोटियाँ हैं – वचन, लिंग, पुरुष, काल आदि।

वचन आधार पर संरूप

जब भाषा में एकवचन से बहुवचन बनाने की प्रक्रिया होती है, तो बहुवचन के अनेक संरूप सामने आते हैं; यथा–

ए –	लड़का > लड़के,	घोडा > घोड़े
ओं–	लड़का > लड़कों,	घोड़ा > घोड़ों
आँ –	लड़की > लड़कियाँ	धोती > धोतियाँ
ओं –	लड़की > लड़कियों	घोड़ी > घोड़ियों
एँ –	गौ > गौएँ	बहन > बहनें

संबोधन संदर्भ के संरूप

ओ –	घोड़ा > घोड़ो	मित्र > मित्रो
ओ –	लड़की > लड़कियो	साधु > साधुओ

हिन्दी में बहुवचन रूपिम और संरूप के आधार को इस प्रकार प्रदर्शित कर सकते हैं–

रूप	संरूप	वितरण
ओं	ओं	बहुवचन पुल्लिंग – छोड़ों, लड़कों, चाकुओं, भालुओं

	बहुवचन स्त्रीलिंग– रोटी > रोटियों, धोती >
	धोतियों, लड़की >लड़कियों
ए	आकरांत पुल्लिंग – लड़के, घोड़े, गधे, कुत्ते
आँ	इ/इकारांत स्त्रीलिंग – जाति > जातियाँ, धोती
	> धोतियाँ, रोटी > रोटियाँ
ओ	संबोधनार्थ पुल्लिंग और स्त्रीलिंग
	कवि > कवियो, लड़का > लड़को, छात्र >छात्रो,
	साथी > साथियो, भारतवासी> भारतवासियो।

हिंदी स्त्रीलिंग संरूप

हिंदी में स्त्रीलिंग संरूप की प्रक्रिया भावाभिव्यक्ति में विशेष सहयोगी होती है। इस रूप का वितरण प्रस्तुत है –

रूपिम	संरूप	वितरण
ई	ई	हिंदी का बहुल प्रयुक्त संरूप है–
		लड़की, घोड़ी, धोती, काली, अच्छी,
		भद्दी, हरी, भरी आदि
	आ	बाला, अनुजा, आत्मजा, महोदया आदि
	इन	धोबिन, नाइन, पंडिताइन आदि

इस प्रकार स्त्रीलिंग के लिए ई, आ, इन संरूप हैं।

हिंदी सर्वनाम के संरूप

हिंदी में विभिन्न सर्वनामों के लिए संरूपों का प्रयोग कर भाषा को समृद्ध बनाया गया है। इससे अभिव्यक्ति को दिशा मिलती हैं; यथा–

रूपिन	संरूप	वितरण/प्रयोग स्थिति
यह	यह	अविकारी संरूप
	इस	विकारी संरूप
	ऐ	सा, से (ऐसा, ऐसे)
	ठ	धर, तना (इधर, इतना)
	वे	अविकारी
	उन	विकारी
	उन्ह	एँ (उन्हें)

	उन्हों	ने (उन्होंने)
वह	वह	अविकारी
	उस	विकारी
	उ	धर तना (उधर, उतना)
मैं	मैं	बहुल प्रयुक्त
	मुझ	से (मुझसे)
	में	रा (मेरा)
तू	तू	अविकारी (बहुल प्रयुक्त)
	ते	रा (तेरा)

हिंदी विशेषण संरूप

हिंदी के संख्यावाचक शब्दों में संरूप प्रबलता से प्रयुक्त होते हैं; यथा–

रूपिम	**संरूप**	**वितरण**
एक	एक	बहुत प्रयुक्त
	ग्या	रह (ग्यारह)
	इवय	सी, नवे (इक्यासी, इक्यानवे)
	प्रथ	म (प्रथम)
दो	दो	बहुल प्रयुक्त
	ब	तीस (बतीस) लीस (बयालीस) हत्तर (बहत्तर)
	बा	रह (बारह), ईस (बाईस) वन (बावन)
	दोन	ओं (दोनों)
तीन	तीन	बहुल प्रयुक्त
	ते	रह (तेरह) ईस (तेईस)
	तैं	तीस (तैंतीस) तालीस (तैंतालीस)
	तिर	पन (तिरपन) सठ (तिरसठ) असी (तिरासी)
	तिरा	नवे (तिरानवे)
पाँच	पाँच	बहुल प्रयुक्त

पच	ईस (पचीस) पन (पचपन), हत्तर (पचहत्तर)
पैं	तीस (पैंतीस) तालीस (पैंतालीस), सठ (पैसठ)
पंच	परमेश्वर (पंचपरमेश्वर) अमृत (पंचामृत) वटी (पंचवटी), तंत्र (पचतंत्र)

इस प्रकार भाषा में संरूपों के द्वारा भाषा में अभिव्यक्ति के लिए पर्याप्त आधार उपलब्ध हो जाते हैं।

(स) रूपिम का स्वरूप

रूपिम को रूपग्राम भी कहते हैं। रूपिम की आधारभूत इकाई रूप या पद है। रूपिम की भूमिका वाक्य–निर्माण और भाव अभिव्यक्ति में होती हैं।

रूपिम वैसे स्वयं में अर्थहीन इकाई है, किंतु इसके प्रयोग से अर्थ को विशेष दिशा मिल जाती है। इस प्रकार इसमें अर्थ भेदक क्षमता होती हैं।

परिभाषा

विभिन्न विद्वानों ने रूपिम की प्रवृत्ति के अनुसार उसकी परिभाषा की है। कुछ भाषाविदों की परिभाषाएँ उल्लेखनीय हैं –

डॉ0 भोलानाथ तिवारी ने रूपिम को परिभाषित करते हुए लिखा है–

"भाषा या वाक्य की लघुतम सार्थक इकाई को रूपिम कहते हैं।"

डॉ0 उदयनारायण तिवारी के अनुसार – "पदग्राम (रूपिम) वस्तुतः परिपूरक वितरण या मुक्त वितरण में आए हुए सहपदों (संख्या) का समूह हैं।"

डॉ0 सरयूप्रसाद अग्रवाल के अनुसार – "रूप भाषा की लघुतम अर्थपूर्ण इकाई होती है, जिसमें एक अथवा अनेक ध्वनियों का प्रयोग किया जाता है।"

डॉ0 नरेश मिश्र ने रूप और अर्थ संबंध को प्रकट करते हुए लिखा है–

"वाक्य रचना में रूप और अर्थ से संबंधित लघुतम इकाई रूपिम या रूपग्राम है।"

स्वरूप

प्रत्येक भाषा में रूपिम की व्यवस्था उनकी अर्थ–प्रवृत्ति के आधार पर होती है। रूपिम के स्वरूप को उसकी अर्थ–भेदक संरचना के आधार पर निर्धारित किया जाता है। इस प्रकार प्रत्येक भाषा के रूपिमों का स्वरूप भी भिन्न होना निश्चित है।

हिंदी रूपिम संरचना विचार करने के लिए 'पढ़वाऊँगा' शब्द या पद पर विचार किया जाए, तो ये रूप सामने आएँगे –

पढ़वाऊँगा – पढ़ – (धातु रूपिम)

वा – (प्रेरणार्थक रूपिम)

ऊँ – (उत्तम पुरुष, एकवचन सूचक रूपिम)

ग – (भविष्य कालसूचक रूपिम)

आ – (पुल्लिंगसूचक रूपिम)

'पढ़वाऊँगा' शब्द या पद में पाँच रूपिम हैं। इस आधार पर हिंदी भाषा में अन्य शब्दों की रचना की जाती है; यथा–

चलवाऊँगा	चल >	चलना, चला, चलता आदि।
	वा >	चलवाना, मरवाना, पिटवाना, लिखवाना आदि
	ऊँ >	चलवाऊं, मिलवाऊँ, सुनवाऊँ, आऊँ आदि।
	ग >	जाएगा, जाएगी, जाएंगे, रोयेगा आदि।
	आ >	पढ़ा, दौड़ा, भागा, चलेगा आदि।

भाषा के शब्द से लेकर वाक्य तक में रूपिम का अस्तित्व विद्यमान होता है। इस प्रकार कह सकते हैं कि भाषा की संरचना में रूपिम की विशेष भूमिका होती है। एक वाक्य में रूपिम की स्थिति इस प्रकार कर सकते हैं –

"फूलों की सुंदरता किसका मन हर नहीं लेती !"

1. /फूल/	2. /ो/(ओं) बहुवचन प्रत्यय
2. /की/(करण प्रत्यय)	4. /सुंदर/
5. /ता/ भाववाचक प्रत्यक	6. /किस/
7. /का/कारक प्रत्यय	8. /मन/
9. /हर/	10. /नहीं/
11. /लेत/	12. /ी/(ई) स्त्री प्रत्यय

रूपिम की रचना में एक या एक से अधिक रूपिम हो सकते हैं। इस आधार पर एकाक्षरी और बहुअक्षरी रूपिम की संज्ञा दी जाती है।

3.5 रूपिमों का वर्गीकरण

रूपिम को रूपग्राम और पदग्राम भी कहते हैं। रूप प्रक्रिया की आधारभूत इकाई रूपिम है। यह वाक्य–रचना और अर्थ अभिव्यक्ति की सहायक इकाई है। यह अर्थहीन होकर भी अर्थ–भेदक इकाई हैं।

रूपिम वाक्य – रचना और अर्थ–अभिव्यक्ति की इकाई है।

परिभाषा

डॉ0 भोलानाथ तिवारी के अनुसार – "भाषा या वाक्य की लघुतम अर्थपूर्ण सार्थक इकाई रूपग्राम है।"

डॉ0 नरेश मिश्र के अनुसार – "वाक्य रचना में रूप और अर्थ से संबंधित लघुतम इकाई रूपिम या रूपग्राम हैं।"

वर्गीकरण – भाषा अथवा वाक्य में प्रयुक्त रूपिमों के वैज्ञानिक अध्ययन के लिए कुछ प्रमुख आधारों पर इस प्रकार वर्गीकृत कर सकते हैं –

1. प्रयोग आधार – वाक्य में रूपिम कभी स्वतंत्र रूप में प्रयुक्त होते हैं, तो कभी किसी वाक्यांश के साथ प्रयुक्त होते हैं। रूपिम की इन प्रयोग प्रवृत्तियों के आधार पर इन्हें मुख्यतः तीन वर्गों में विभक्त कर सकते हैं।

(क) मुक्त रूपिम – वाक्य में स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त होने वाले रूपिम को मुक्त रूपिम की संज्ञा दी जाती है। ऐसे रूपिम में एक मूल शब्द–सरंचना की शक्ति होती है। हिंदी में ऐसे रूपिमों का बहुल प्रयोग होता है; यथा– /मन/ और /बात/ मुक्त रूपिम है। इनके द्वारा एकरूपिमिक शब्द 'मन' और 'बात' की संरचना होती है। वाक्य में इनका स्वतंत्र (मुक्त) रूप में प्रयोग संभव है।

मन बात > मैं मन की बात कहूँगा

भाषा की लघुतम अर्थवान इकाई रूपिम के विभिन्न रूपों में मुक्त रूपिम का सर्वाधिक महत्त्व है, क्योंकि अन्य रूपिम भी इसी पर आधारित होकर प्रयुक्त होते हैं।

ब्हुरूपिमिक शब्दों के सभी रूपिम मुक्त वर्ग के हो सकते हैं; यथा–डाकघर>/डाक/घर /जलपान>/जल/पान/

हिंदी में मुक्त रूपिम का प्रयोग स्वतंत्र शिरोरेखा में भी होता है; यथा– राजीव घर जा रहा है। श्याम ने कहा है। भाषा के अर्थ तत्त्व प्रायः मुक्त रूपिम होते हैं।

(ख) बद्ध रूपिम – ऐसे रूपिम जो शब्द में किसी अन्य रूपिम के साथ प्रयुक्त होते है, इन्हें बद्ध रूपिम कहते हैं। इनके सहयोग से भावाभिव्यक्ति को दिशा मिलती है। इनका प्रयोग स्वतंत्र रूप में नहीं होता है। विभिन्न प्रकार के प्रत्यय बद्ध रूपिम है; यथा–

वचन प्रत्यय आधारित बद्ध रूपिम –	ए–	लड़का	>	लड़के
		घोड़ा	>	घोड़े
	ओं–	बालक	>	बालकों
		वृक्ष	>	वृक्षों
	इयाँ–	लड़की	>	लड़कियाँ
		धोती	>	धोतियाँ
लिंग प्रत्यय आधारित बद्ध रूपिम–	ई–	काला	>	काली
		लड़का	>	लड़की
	आ–	बाल	>	बाला
		अनुज	>	अनुजा

	इन–	धोबी	>	धोबिन
		नाई	>	नाइन
भावावाचक प्रत्यय आधारित बद्ध रूपिम– पा–		बूढ़ा	>	बुढ़ापा
	पन–	बाल	>	बालपन
	ता–	मनुष्य	>	मनुष्यता

ऊपर संकेत किए गए, ओं, इयाँ, ई, आ, इन, पा, पन, ता आदि विभिन्न कारक प्रत्यय आधारित बद्ध रूपिमों की भाषा में एकाकी प्रयोग संभव नहीं है। ऐसे रूपिम सदा ही किसी अन्य रूपिम के साथ प्रयक्त होते हैं।

(ग) मुक्तबद्ध रूपिम – इसे अर्द्धमुक्त, अर्द्धबद्ध और बद्धमुक्त रूपिम भी कहते हैं। इस वर्ग में ऐसे रूपिम को रखते हैं, जो प्रायः देखने में स्वतंत्र लगते हैं; किंतु वे किसी न किसी वाक्यांश से जुड़े होते हैं। ऐसे रूपिम को संबंध तत्त्व के रूप में भी देख सकते हैं, जिनका प्रयोग अर्थ तत्त्व संबंधित रूपिम के साथ होता है; यथा–

ने–	उस	>	उस ने/उसने
	मनु	>	मनु ने
को–	उन	>	उन को/उनको
	नीलम	>	नीलम को
से–	राजीव	>	राजीव को
	मैं (मुझ)	>	मुझ से/मुझसे

यहाँ पर द्रष्टव्य है कि सर्वनाम रूपिमों के साथ ऐसे रूपिम मुक्त और बद्ध दोनों ही रूपों में प्रयुक्त होते हैं इनके प्रथम रूप मानक मान लिए गए हैं; यथा–उसने–उस ने, उनको – उन को आदि।

2. संरचना–आधार – रूपिमों को अर्थ संरचना की दृष्टि से मुख्यतः तीन वर्गों में विभक्त कर सकते हैं –

(क) मूलक रूपिम– जिन रूपिमों की रचना मात्र अर्थतत्त्व के माध्यम से होती है, उसे मूल रूपिम कहते है। ऐसे रूपिमों से संबंध तत्त्व की कोई भूमिका नहीं होती है; यथा–गाय, दिन, घड़ी आदि। ऐसे रूपिम के साथ उपसर्ग या प्रत्यय का विशेष योग नहीं होता है।

(ख) संयुक्त रूपिम – जब दो या दो से अधिक रूपिम एक साथ प्रयुक्त हों और उनमें एक अर्थतत्त्व आधारित हो शेष रूपिम उपसर्ग या प्रत्यय आधारित हों, तो उसे संयुक्त रूपिम कहते हैं। ऐसे रूपिमों की संरचना व्याकरणिक कोटियों पर आधारित होती है; यथा– लड़कियाँ और गाएँगी। इन दोनों संरचना को इस प्रकार व्यक्त करत सकते हैं;

लड़कियाँ > लड़की (मूल रूपिम) + इयाँ (बहुवचन प्रत्यय आधारित रूपिम)

गाएँगी > गा (मूल, अर्थ तत्त्व आधारित रूपिम) + एँ (बहुवचन सूचक प्रत्यय आधरित रूपिम)+ गी (स्त्रीलिंग प्रत्यय आधारित रूपिम)

(ग) मिश्रित रूपिम – जब दो या दो से अधिक मूल अथवा अर्थतत्त्व आधारित रूपिम एक साथ प्रयुक्त हों, तो उसे मिश्रित रूपिम की संज्ञा दी जाती है; यथा– मालगाड़ी, वायुसेनाध्यक्ष आदि। इन रूपिमों का विश्लेषण इस प्रकार किया जा सकता है–

मालगाड़ी > माल (अर्थतत्त्व आधारित रूपिम) गाड़ी (अर्थतत्त्व आधारित रूपिम)

वायुसेनाध्यक्ष > वायु (अर्थतत्त्व आधारित रूपिम)+से (सेना) (अर्थतत्त्व आधारित रूपिम) + अध्यक्ष (अर्थतत्त्व आधारित रूपिम)

3. **अर्थ एवं कार्य व्यापार–आधार** – जब रूपिम में अर्थतत्त्व अथवा संबंध– तत्त्व के माध्यम से भावाभिव्यक्ति संभव हो, तो उक्त आधार पर रूपिमों को मुख्यः दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं–

(क) अर्थदर्शी रूपिम – जब वाक्य में रूपिम मात्र अर्थतत्त्व पर आधारित होता है, तो उसे अर्थदर्शी रूपिम कहते हैं। भाषा–भवन की संरचना में ऐसे रूपिम का सर्वाधिक महत्त्व है। ऐसे रूपिमों की विविधता और उनकी संख्या भावाभिव्यक्ति में विशेष भूमिका निभाती है।

संज्ञा रूपिम	–	सीता, मनु, कलम।
विशेषण रूपिम	–	मधुर, अच्छा, काला।
क्रिया रूपिम	–	जाना, हँसना, चलना।

(ख) संबंधदर्शी रूपिम – जब वाक्य में रूपिम मात्र संबंध–तत्त्व पर आधारित होता है, तो उन्हें संबंधदर्शी रूपिम कहते हैं। इन रूपिमों को भाषा का प्रकार्यात्मक पक्ष कह सकते हैं। संबंधदर्शी रूपिमों से भाषा में व्याकरणिक कोटियों का बोध होता है। इसके अंतर्गत वचन, लिंग, काल, पुरुष और कारक आदि से संबंधित रूपिम आते हैं।

वचन आधारित रूपिम –	ए	–	लड़के, घोड़े, मोटे।
	ओं	–	लड़कों, घोड़ों, मोटों।
	इयाँ	–	लड़कियाँ, धोतियाँ, रोटियाँ।
लिंग आधारित रूपिम –	आ	–	बाला, अनुजा, आत्मजा
	ई	–	लड़की, भोली, काली।
कारक आधारित रूपिम–	ने	–	गुलशन ने, उसने, आपने
	को	–	भोला को, मुझको, किसको।
	का	–	गाँधी का, आपका, जिसका।
काल आधारित रूपिम –	गा	–	जाएगा, मारेगा, गिरेगा।
	या	–	गया, खाया, पाया।

4. खंड आधार – कुछ रूपिमों के खंड किए जा सकते हैं, तो कुछ अखंड्य होते हैं। इस आधार पर रूपिम को दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं –

(क) खंड्य रूपिम – जिन रूपिमों के दो या दो से अधिक खंड किए जा सकते हैं, उन्हें खंड्य रूपिम कहते है; यथा–डाकघर > डाक/घर/, जाएगी > जा/, /ए/,गी/ आदि।

(ख) अखंड्य रूपिम – जिन रूपिमों के सार्थक खंड न किए जा सके; उन्हें अखंड्य रूपिम कहते हैं यथा–बलाघात (Stress), सुर (tone), सुरलहारी (intonation)।

3.8 वाक्य के प्रकार

भाषा की विभिन्न इकाइयों में वाक्य का विशेष महत्त्व है, क्योंकि वाक्य से पूर्ण अर्थ का ज्ञान होता है। वाक्य की पूर्ण सार्थकता को रेखांकित करते हुए विभिन्न विद्वानों ने इसकी परिभाषा इस प्रकार दी है –

परिभाषा

(क) महर्षि पतंजलि ने महाभाष्य में वाक्य की परिभाषा देते हुए लिखा है –

"आख्यात साव्ययकारक विशेषण वाक्यम्।" अर्थात् जहाँ क्रिया अव्यय, कारक तथा विशेषण पद का एक साथ योग हो, उसे 'वाक्य' कहते हैं।

(ख) डॉ0 भोलानाथ तिवारी ने वाक्य को परिभाषित करते हुए लिखा है – "वाक्य भाषा की सहज इकाई है, जिसमें एक या अधिक शब्द हों, जो अर्थ की दृष्टि से पूर्ण हो या अपूर्ण, व्याकरणिक दृष्टि से अपने विशिष्ट संदर्भ में अवश्यपूर्ण हो, साथ ही परोक्ष रूप से कम से कम एक क्रिया का भाव अवश्यक होता है।"

(ग) प्रसिद्ध वैयाकरण पं0 कामताप्रसाद गुरु ने पूर्ण भावाभिक्ति को आधार बना कर वाक्य को इस प्रकार परिभाषित किया है–

"प्रत्येक पूर्ण विचार को वाक्य और प्रत्येक भावना को शब्द कहते हैं।"

(घ) आचार्य देवेंद्रनाथ शर्मा ने भाषा की इकाइयों में वाक्य के महत्त्व को रेखांकित करते हुए उसकी परिभाषा इस प्रकार दी है–

"वाक्य पूर्णतः मानसिक या मनोवैज्ञानिक तत्त्व है। उसमें पदों का प्रयोग भाव या विचार के अनुसार होता है। पद, ध्वनि और वाक्य के बीच की संयोजन कड़ी हैं, क्योंकि उसमें उच्चारण और सार्थकता दोनों का योग रहता है, किंतु न तो ध्वनि की तरह वह केवल उच्चारण है और न वाक्य की तरह पूर्णतः सार्थक।"

(ड) डॉ0 नरेश मिश्र ने पूर्ण सार्थकता की दृष्टि से वाक्य को परिभाषिक करते हुए लिखा है। "भाषा की पूर्ण सार्थक महत्त्वपूर्ण इकाई वाक्य है, जिसमें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कम से कम एक क्रिया का होना अनिवार्य हैं।"

वाक्य के प्रकार

पूर्ण अर्थ प्रकट करने वाली भाषा की इकाई वाक्य का कई दृष्टियों से वर्गीकरण किया जा सकता है। इनमें प्रमुख हैं – संरचना–आधार और अर्थ–आधार।

3.8.1 वाक्य का संरचना–आधार पर वर्गीकरण

संरचना के आधार पर वाक्य के तीन भेद किए जाते हैं –

क. सरल वाक्य

ख. संयुक्त वाक्य

ग. मिश्र वाक्य

क. सरल वाक्य

जिस वाक्य में एक मूल क्रिया हो, तो उसे सरल वाक्य कहते हैं; यथा– वह घर गया।

यहाँ 'गया' एक मात्र क्रिया है, जो 'जाना' की भूतकालिक रूप है। ऐसे वाक्य में मूल क्रिया के साथ एक या अधिक सहायक कियाएँ भी हो सकती है; जैसे–

- मनोहर जाता है। (जाता (जाना) मूल क्रिया + है (होना) सहायक क्रिया।
- मनोहर जा रहा है। (जा (जाना) मूल क्रिया + रहा (रहना) और है (होना) सहायक क्रियाएँ है।

सरल वाक्य के उद्‌देश्य या कर्ता का विस्तार भी हो सकता है; यथा'

- राम वन गए।
- चक्रवर्ती राजा दशरथ के पुत्र राम वन गए।

यहाँ 'राम वन गए'। वाक्य के 'राम' कर्ता का पदबंध से विस्तार किया गया है। कर्ता में एकाधिक पद होने पर भी सरल वाक्य की संरचना होती है; यथा–

सविता, स्नेह और निधि बाजार जा रही हैं।

इस वाक्य में तीन नाम कर्ता के स्थान पर प्रयुक्त हैं, किंतुं मूल क्रिया एक है। अतः सरल वाक्य है।

ख. संयुक्त वाक्य

जब किस वाक्य में दो या दो से अधिक प्रधान उपवाक्यों की योजना हो, तो संयुक्त वाक्य कहते हैं। ऐसे वाक्य एक दूसरे पर आश्रित न होकर पूर्ण स्वतंत्र होते हैं। दोनों वाक्य संयोजक तत्त्व (शब्द) से जुड़े होते हैं। संयुक्त वाक्य के मध्य से यदि संयोजक शब्द निकाल दिया जाए, तो दो या दो से अधिक स्वतंत्र सरल वाक्य बन जाते हैं, यथा–

मैं लिख रहा हूँ और आप हँस रहे हैं।

'और' संयोजक तत्त्व। सरल वाक्य रूप – मैं लिख रहा हूँ।

आप हँस रहे हैं।

यदि वाक्य में दो मूल क्रिया हों और मध्य में और, तथा, वा, या, एवं वरना, किंतु, परंतु आदि संयोजक (समुच्चयबोधक अव्यय) का प्रयोग हो, तो संयुक्त वाक्य होते हैं; यथा–

तुम चुप हो जाओ वरना मेरा हाथ उठ जाएगा।

संसार में सब कुछ है, लेकिन आदमी में गुण होना चाहिए।

सत्य सत्य चिल्लाते हो पर यह सत्य से बहुत दूर है।

ग. मिश्र वाक्य

मिश्र वाक्य को जटिल वाक्य भी कहा जाता है। जिस वाक्य में एक प्रधान उपवाक्य हो और साथ में एक या एकाधिक आश्रित उपवाक्य हों वह मिश्र वाक्य होता है। सामान्य भावाभिव्यक्ति के लिए सरल या साधारण वाक्या का प्रयोग किया जाता है। विशेष भावाभिव्यक्ति के लिए मिश्र वाक्य का प्रयोग किया जाता है।

मिश्र वाक्य को आश्रित वाक्य के आधार पर चार वर्गों में विभक्त कर सकते हैं–

1. संज्ञा उपवाक्य

जब मिश्र वाक्य के प्रधान उपवाक्य की क्रिया की पूर्ति संज्ञार्थी वाक्य से होती है; यथा–

उसने कहा कि वह घर जाएगा। (प्रधान वाक्य + आश्रित संज्ञा वाक्य)

2. विशेषण उपवाक्य

जब मिश्र वाक्य का आश्रित उपवाक्य, प्रधान उपवाक्य का विशेषण सूचक हो; यथा– जो ले जा रहे हो, वह मेरा है। (विशेषण उपवाक्य + प्रधान उपवाक्य)

3. क्रियाविशेषण उपावाक्य

जब आश्रित उपवाक्य मिश्र वाक्य के प्रधान उपवाक्य की क्रिया की विशेषता के रूप में प्रयुक्त हो, यथा–

जब–जब मैं गया तब–तब वह नहीं मिला। (क्रिया विशेषण उपवाक्य + प्रधान उपवाक्य)

4. संज्ञा विशेषण उपवाक्य

मिश्र वाक्य में एक प्रधान उपवाक्य के साथ एकाधिक आश्रित उपवाक्यों का प्रयोग हो सकता है; यथा–

मनोहर ने कहा, "मैं वह पुस्तक जानता हूँ, जो सर्वाधिक उपयोगी है।"

(प्रधान उपवाक्य + आश्रित संज्ञा उपवाक्य + आश्रित विशेषण उपवाक्य)

इस प्रकार मिश्र वाक्य से गंभीर से गंभीर भावों की अभिव्यक्ति संभव है।

3.8.2 अर्थ आधार पर वाक्य के भेद

वाक्य भाषा की पूर्ण सार्थक इकाई है। वाक्य के द्वारा विभिन्न प्रकार के अर्थों की अभिव्यक्ति होती है। इस प्रकार वाक्य का अर्थ–संदर्भ में उपयोग विशेष महत्त्वपूर्ण है। अर्थ–अभिव्यक्ति के संदर्भ में वाक्य के मुख्यतः आठ भेद किए जाते हैं।

क. विधिवाचक वाक्य

जिस वाक्य से किसी बात या संदर्भ का स्पष्ट ज्ञान हो, उसे विधिवाचक वाक्य की संज्ञा दी जाती है; यथा–

सरलवाक्य – उसे याद हो गया।

संयुक्त वाक्य – मैंने पानी पिया और मेरी प्यार मिट गई।

मिश्र वाक्य – मैं पत्र लिख चुका तब वह आया।

ख. निषेधवाचक वाक्य

जिस वाक्य में कार्य न होने का भाव व्यक्त हो, उसे निषेधवाचक वाक्य कहते हैं; यथा–

सरल वाक्य – मैं नहीं जाऊँगा।

संयुक्त वाक्य – मैंने कुछ नहीं पढ़ा और मुझे कुछ भी याद नहीं है।

मिश्र वाक्य – मुझे ज्यादा भूख नहीं लगी थी इसलिए अधिक खाना नहीं खाया।

ग. आज्ञावाचक वाक्य

जिस वाक्य में आदेश, आज्ञा या निर्देश का भाव हो, उसे आज्ञावाचक या आज्ञार्थक वाक्य कहते हैं; यथा–

तुम सो जाओ। तुम घर चले जाओ।

घ. प्रश्नावाचक वाक्य

जिस वाक्य में प्रश्न करने की प्रक्रिया का बोध हो; यथा–

तुम क्या कर रहो हो? तुम वहाँ कब जाओगे?

ड. विस्मयवाचक वाक्य

जिस वाक्य में गंभीर भाव में आश्चर्य, सुख, दुख का बोध हो, यथा–

हाय! वह नहीं रहा। वाह! वाह! वह जीत गया।

च. संदेहवाचक वाक्य

जिसमें किसी संदर्भ से संदेह लगे; यथा–

शायद वह आज आ जाए। वह चला गया होगा।

छ. इच्छावाचक वाक्य

जिस वाक्य से इच्छा या शुभकामना का बोध हो; यथा– तुम्हें अच्छी सफलता मिले। आज का दिन शुभ हो।

ज. संकेतवाचक वाक्य

जहाँ वाक्य में अनुकूल–प्रतिकूल स्थिति के निश्चय की संभावना लग रही हो; यथा–

आज मौसम ठीक रहा, तो मैं कलकत्ता जाऊँगा।

आप खाना शुरू कीजिए, तब मैं भी खाऊं।

इस प्रकार वाक्य के माध्यम से विविधि भावों की अनुकूल अभिव्यक्ति संभव होती है।

3.10 सारांश

इस इकाई में भाषा की व्याकरणिक योग्यता प्राप्त इकाई रूप या पद पर विचार किया है। जब शब्द में वाक्य बनाने की क्षमता हो जाती है, उसे उसे रूप की संज्ञा दी जाती है। इस प्रकार रूप निश्चय हो शब्द से वृहत्तर इकाई है। रूप निर्माण में मुख्यतः अर्थतत्त्व और संबंध तत्त्व की योजना होती है; यथा– 'प्रवीण' एक शब्द है। जब प्रवीण रूप या पद बनता है, तो इसके साथ ने को, से, पर आदि संबंध की संदर्भ के अनुसार योजना की जाती है, उदाहरणार्थ– 'प्रवीण ने', 'प्रवीण को' 'प्रवीण से', 'प्रवीण पर' आदि। वाक्य भाषा की पूर्ण सार्थक और महत्त्वपूर्ण

इकाई है। अर्थ अभिव्यक्ति की दृष्टि से वाक्य का सर्वाधिक महत्त्व है। वाक्य रचना के विषय में कहा जा सकता हे कि विविध पदों की योजना से वाक्य की रचना होती है। कुछ विद्वानों का कथन है कि वाक्य का विशेष महत्त्व है और वाक्य के अंश के रूप में रूप या पद विद्यमान होते हैं।

वाक्य संरचना की दृष्टि से सरल, संयुक्त और मिश्र तीन प्रकार के होते है। सामान्य भावों की अभिव्यक्ति के लिए सरल वाक्य का प्रयोग किया जाता है, जिसमें एक मूल क्रिया होती है। संयुक्त और मिश्र वाक्य में कम से कम दो उपवाक्यों की योजना होती है।

वाक्य की विविध रचना के ज्ञान से विभिन्न भावों की अभिव्यक्ति सरल हो जाती है।

3.11 मुख्य शब्दार्थ

- रूप का अर्थ है – पद।
- संरूप का अर्थ है– उपरूप या रूप के विविध उपरूप?
- व्याकरणिक कोटि – व्याकरण के मुख्य अंग।
- संयुक्त वाक्य – संयोजक से जुड़े दो सरल वाक्य।

3.12 स्वप्रगति परीक्षण

- शब्द की परिभाषा है– 'भाषा की लघुतम, स्वतंत्र सार्थक इकाई शब्द है।'
- पद की परिभाषा है– भाषा की व्याकरणिक योग्यता प्राप्त इकाई पद है।
- वाक्य की परिभाषा है – भाषा की पूर्ण सार्थक महत्त्वपूर्ण इकाई वाक्य है।
- संरचना की दृष्टि से सरल, संयुक्त और मिश्र वाक्य होते हैं।
- वाक्य में प्रायः एकाधिक पदों या रूपों का प्रयोग होता है।

3.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

- शब्द की परिभाषा देकर रूप से तुलना कीजिए।
- भाषा के रूप संदर्भ में अर्थ तत्त्व और संबंध तत्त्व का परिचय दीजिए।
- रूप और रूपिम का विवेचन कीजिए।
- भाषा की इकाई के रूप में वाक्य की विवेचना कीजिए।
- वाक्य संदर्भ में अभिहितान्वयवाद और अन्विताभिधानवाद का परिचय दीजिए।
- वाक्य का संरचना की दृष्टि से वर्गीकरण कीजिए।
- वाक्य का अर्थ की दृष्टि से वर्गीकरण कीजिए।
- वाक्य की गहन और बाह्य संरचना स्पष्ट कीजिए।

3.14 पठनीय पुस्तकें

1. भाषाविज्ञान और हिंदी भाषा, डॉ0 नरेश मिश्र, अभिनव प्रकाशन, दिल्ली, सन् 2014
2. भाषाविज्ञान और हिंदी भाषा, प्रो0 नरेश मिश्र, संजय प्रकाशन, दिल्ली, सन् 2006
3. भाषा और हिंदी भाषा का इतिहास, डॉ0 नरेश मिश्र, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला, सन् 2006
4. हिंदी भाषा की रूप संरचना – डॉ0 भोलानाथ तिवारी, साहित्यकार, दिल्ली, सन् 1986
5. हिंदी भाषा की वाक्य संरचना, डॉ0 भोलानाथ तिवारी, साहित्य सहकार, दिल्ली, सन् 1986
6. हिंदी भाषा का विकास, डॉ0 गोपाल राय, अनुपम प्रकाशन, दिल्ली, सन् 1995
7. हिंदी : उद्‌भव, विकास और रूप, डॉ0 हरदेव बाहरी, किताब महल, इलाहाबाद, सन् 1980
8. भाषाविज्ञान, डॉ0 भोलानाथ तिवारी, किताब महल, इलाहाबाद, सन् 2015
9. भाषा और भाषिकी, डॉ0 देवीशंकर द्विवेदी, प्रशांत प्रकाशन, कुरुक्षेत्र, सन् 1974

इकाई 4 अर्थविज्ञान

4.0 परिचय

4.1 इकाई उद्देश्य

4.2 अर्थ की अवधारण, शब्द–अर्थ संबंध

4.3 अर्थ बोध के साधन

4.4 एकार्थक, अनेकार्थक

4.5 अर्थ–परिवर्तन की दिशाएँ

4.6 सारांश

4.7 मुख्य शब्दार्थ

4.8 स्वप्रगति परीक्षण

4.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.10 पठनीय पुस्तक

4.0 परिचय

जिस प्रकार मानव और मानव शरीर का तब तक महत्त्व है जब तक उसमें आत्मा है अर्थात् प्राण तत्त्व विद्यमान है। इसी प्रकार भाषा की शारीरिक इकाइयों ध्वनि, वर्ण, शब्द, पद और वाक्य का महत्त्व अर्थ इकाई पर आधारित है। जिस प्रकार प्राणविहीन मनुष्य निर्जीव होता है, ठीक उसी प्रकार अर्थहीन भाषा का अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है। सार्थकता की दृष्टि से शब्द भाषा की लघुतम सार्थक इकाई है। इसलिए शब्द और अर्थ के अभिन्न संबंध की चर्चा की गई है। यह निर्विवाद सत्य है कि कुछ शब्द ऐसे होते हैं, जिनका एक ही अर्थ होता है और कुछ शब्द ऐसे होते हैं, जिनके लिए कई–कई अर्थ प्रचलित होते हैं। जिस प्रकार प्रकृति के प्रत्येक अंग में परिवर्तन का क्रम चलता रहता है, वैसे ही शब्द के अर्थ में परिवर्तन का क्रम चलता रहता है।

4.1 इकाई का उद्देश्य

भाषा मनुष्य की विशेष उपलब्धि है। वह अपने भावों को दूसरों तक पहुँचाना चाहता है और दूसरों के भाव स्वयं जानना चाहता है। इसके लिए भाषा की अर्थ अभिव्यक्ति की शक्ति का ज्ञान आवश्यक है। प्राचीन काल से ही यह तथ्य स्पष्ट किया गया है कि शब्द और अर्थ का अभिन्न संबंध है। शब्द का अस्तित्व तब तक ही है जब तक उसका अर्थ है। वैसे कहा जाता है कि ध्वनि या वर्ण समूह को शब्द कहा जाता है, किंतु यह समझ लेना चाहिए कि जब तक ध्वनि समूह का अर्थ नहीं होगा, तब तक वह शब्द नहीं होगा।

शब्द के अर्थ–ज्ञान के लिए हमें विविध आधारों को अपनाना होता है। कभी शब्दकोश से शब्दार्थ समझते हैं, तो कभी शब्द को वाक्य में प्रयोग कर अर्थ समझ जाते हैं। हिंदी की विशेष शक्ति है कि कुछ शब्द एकार्थी होते हैं, तो कुछ के कई–कई समानार्थी या पर्यायवाची होते है। समय और प्रयोग के अनुसार के अर्थ–परिवर्तन का ज्ञान कराना भी विशेष महत्त्व रखता है।

4.6 सारांश

भाषा की महत्त्वपूर्ण इकाई अर्थ है। भाषा की ध्वनि से लेकर वाक्य और प्रोक्ति सब शारीरिक इकाइयाँ हैं। इस इकाइयों को ध्वन्यात्मक रूप में सुन सकते है और लिखित रूप को देख सकते हैं। इस प्रकार यह कह सकते है कि ये इंद्रिय ग्राह्य है, किंतु अर्थ ऐसी इकाई है जो इंद्रिय ग्राह्य न होकर मात्र अनुभूति होती है। शब्द और अर्थ का अभिन्न संबंध है, क्योंकि भाषा की लघुतम इकाई शब्द है जो निश्चित रूप से सार्थक होती है। कोई भी व्यक्ति ऐसा बिरला होगा जिसे सब शब्दों के अर्थ ज्ञान हो। अर्थ–ज्ञान के लिए विविध आधारों का सहारा लिया जाता है। शब्दार्थ अध्ययन से ज्ञात होता है कि कुछ शब्द मात्र एक अर्थ में प्रयुक्त होते हैं, तो कुछ शब्द कई अर्थों में प्रयुक्त होते हैं। शब्द–अर्थ अध्ययन से पता चलता है कि समय–परिवर्तन के साथ शब्दों के अर्थों में परिवर्तन का क्रम चलता रहता है।

इस प्रकार स्पष्ट है अर्थ भाषा की महत्त्वपूर्ण इकाई है, जो भाव अभिव्यक्ति का मुख्य आधार है।

4.7 मुख्य अर्थ

- अवधारणा – परिभाषा, स्वरूप
- अर्थ बोध – अर्थ का ज्ञान
- एकार्थक शब्द – ऐसे शब्द जिसका एक अर्थ हो
- अनेकार्थक शब्द – जिस शब्द के कई अर्थ हों
- अर्थ–संकोच – जब किसी शब्द के पहले कई अर्थ रहे हों, बाद में एक अर्थ रह जाए।
- अर्थ–विस्तार – जब किसी शब्द का एक अर्थ हो, किंतु परवर्ती समय में कई अर्थों में प्रयोग हो।
- दिशाएँ – भेद या प्रकार

4.8 स्वप्रगति–परीक्षण

1. अर्थ भाषा की आत्मा रूपी अनुभूति की इकाई है।
2. शब्द और अर्थ का अभिन्न संबंध है, अर्थात् शब्द का सार्थक होना सुश्चित है।
3. अर्थबोध के साधन से हम कठिन से कठिन शब्दों का अर्थ जान लेते है। अर्थ जानने के आधार ही अर्थ–बोध के साधन हैं।
4. एकार्थक शब्द का प्रयोग मात्र एक ही अर्थ में होता है।
5. अनेकार्थक शब्द का प्रयोग कई–कई अर्थों में किया जाता है।
6. अर्थ–परिवर्तन की मुख्य दिशाएँ हैं – अर्थ–संकोच, अर्थ–विस्तार और अर्थादेश।
7. अर्थादेश अर्थ–परिवर्तन के दो रूप हैं – अर्थोत्कर्ष और अथपिकर्ष।

4.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. अर्थ की अवधारणा स्पष्ट करते हुए शब्द–अर्थ संबंध स्पष्ट कीजिए।
2. अर्थ–बोध के साधनों का सोदाहरण परिचय दीजिए।

3. एकार्थक और अनेकार्थक शब्द–स्वरूप का सोदाहरण परिचय दीजिए।

4. अर्थ–परिवर्तन की दिशाओं का उल्लेख कीजिए।

5. टिप्पणी लिखिए।

क. अर्थ की अवधारणा	ख. शब्द–अर्थ संबंध
ग. एकार्थक शब्द	घ. अनेकार्थक शब्द
ड. अर्थ–विस्तार	च. अर्थादेश

4.10 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी भाषा की आर्थी संरचना, डॉ0 भोलानाथ तिवारी, साहित्य सहकार, दिल्ली, सन् 1984
2. भाषा और हिंदी भाषा का इतिहास, डॉ0 नरेश मिश्र, हरियाणा ग्रंथ अकादमी, पंचकूला, सन् 2006
3. भाषाविज्ञान और हिंदी, डॉ0 नरेश मिश्र, अभिनव प्रकाशन, दिल्ली, सन् 2014
4. भाषाविज्ञान, डॉ0 भोलानाथ तिवारी, किताब महल, इलाहाबाद, सन् 2005
5. सामान्य भाषाविज्ञान, डॉ0 बाबूराम सक्सेना, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, सन् 1983
6. भाषाविज्ञान और हिंदी भाषा, डॉ0 नरेश मिश्र, संजय प्रकाशन, दिल्ली, सन् 2016
7. हिंदी भाषा का विकास, डॉ0 गोपालराय, अनुपम प्रकाशन, दिल्ली, पटना, सन् 1995

इकाई 5 भाषा–लिपि एवं अन्य विषय संबंध

5.0 परिचय

5.1 इकाई उद्देश्य

5.2 भाषा और लिपि के घटकों से संबंध

5.3 भाषा और अन्य शास्त्रों/विषयों से संबंध

5.3.1 भाषाविज्ञान और व्याकरण

5.3.2 भाषाविज्ञान और साहित्य

5.4 व्यतिरेकी भाषाविज्ञान

5.5 समाज भाषाविज्ञान

5.6 सारांश

5.7 मुख्य शब्दार्थ

5.8 स्वप्रगति परीक्षण

5.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.10 पठनीय पुस्तक

5.0 परिचय

भाषा के सांकेतिक, मौखिक और लिखित रूपों में उसके विकास का परिचय मिलता है। सांकेतिक भाषा में भावों की मात्र संकेत रूप में अभिव्यक्ति होती है। इसमें पूर्ण स्पष्टता नहीं होती है। मौखिक भाषा में विभिन्न ध्वनियों के माध्यम से निकट स्थिति व्यक्ति तक विचारों की स्पष्ट अभिव्यक्ति होती है। मौखिक भाषा में वक्ता के मुखांगों और शरीरांगों के प्रचलन और हाव–भाव से भाव की गंभीर अभिव्यक्ति होती है। इनमें लिखित भाषा को सर्वश्रेष्ठ रूप माना जाता है। इसका कारण है कि लिखित भाषा समय और स्थान पार करने की शक्ति से संपन्न होती है। अर्थात् यदि कोई लिखित भाव–विचार या तथ्य हो, तो एक स्थान पर लिखकर देश–विदेश किसी स्थान पर भेजा सकता है। दूसरा यह कि एक समय में लिखा गया कोई भी भाव या विचार महीनों, वर्षों ही नहीं शताब्दियों तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

लिखित भाषा को यह शक्ति लिपि से मिली है। इस महत्त्वपूर्ण आधार लिपि का भाषा के घटकों से अध्ययन करना उपयोगी होगा। भाषा के आधार पर मनुष्य जीवन के विभिन्न क्षेत्रों का ज्ञानर्जन कर उन्नति करता है। साहित्य, ज्ञान–विज्ञान आदि सभी विषयों का अध्ययन भाषा के आधार पर किया जाता है। इसे ही दृष्टिगत कर भाषाविज्ञान और व्याकरण के साथ भाषाविज्ञान और साहित्य के अतःसंबंधों का अध्ययन किया जाएगा।

भाषाविज्ञान के अनेक क्षेत्र हैं। उनमें से समाज में प्रयुक्त बोल–चाल या व्यावहारिक भाषा के अध्ययन संदर्भित समाज भाषाविज्ञान का अध्ययन किया जाएगा। इसके साथ ही भिन्नता बोधन व्यतिरेकी भाषाविज्ञान का उपयोगी अध्ययन कराया जाएगा।

5.1 इकाई का उद्देश्य

भाषा–अध्ययन में लिपि का अध्ययन विशेष महत्त्वपूर्ण है। इसका मुख्य कारण है कि भाषा (उच्चरित) को जब लिपि का आधार मिल जाता है, तो उसमें समय और स्थान पार करने की शक्ति आ जाती है। इसे दृष्टिगत कर भाषा और लिपि के विभिन्न घटकों का अध्ययन किया जाएगा। इससे लेखित भाषा के स्वरूप और शक्ति का ज्ञान होगा।

यह सर्वविदित तथ्य है कि भाषा के ही आधार पर मनुष्य सामाजिक ही नहीं बनता वरन् ज्ञान–विज्ञान आदि विषयों का अध्ययन संभव होता है। भाषा के व्यवस्थित अध्ययन को भाषाविज्ञान कहते हैं। भाषाविज्ञान की सुदृढ़ आधार भूमि को स्पष्ट करने के लिए भाषाविज्ञान से व्याकरण और भाषाविज्ञान से साहित्य के संबंध का वैज्ञानिक रूप में अध्ययन किया जाएगा।

प्रत्येक व्यक्ति की तरह प्रत्येक भाषा की अपनी विशेषताएँ होती है। ये विशेषताएँ दूसरे में पूर्णतः नहीं मिलती इसलिए यह प्रत्येक भाषा की पहचान होती है। इसी भिन्नता के आधार पर व्यतिरेकी भाषाविज्ञान का स्वरूप और महत्त्व का अध्ययन किया जाएगा।

प्रत्येक समाज की अपनी पहचान होती है। उसी प्रकार प्रत्येक भाषाभाषी समाज की अपनी भाषा की विशेषताएँ होती है। इसी मान्यता पर आधारित समाज भाषाविज्ञान के उपयोगी स्वरूप का अध्ययन किया जाएगा।

5.2 भाषा और लिपि के घटकों से संबंध

लिपि का उद्भव भाषा के उद्भव के बहुत बाद में हुआ है। भाषा का अर्थ मुख्यतः बोलने या उच्चारण से लिया जाता है। भाषा तथा लिपि दोनों ही भावाभिव्यक्ति के साधन हैं। दोनों में ही स्वन संकेतों का प्रयोग किया जाता है। दोनों ही मूल रूप में स्वनों पर आधारित हैं। भाषा और लिपि, दोनों ही मानव–उन्नति में परम सहयोगी हैं। दोनों ही प्रयास करके सीखी जाती है अर्थात् भाषा तथा लिपि ज्ञान प्रयत्न–आधारित अर्जित संपत्ति हैं। भाषा और लिपि का अध्ययन करने से उनके घटकों में निम्नलिखित पारस्परिक संबंध सामने आते हैं–

1. संकेत व्यवस्था– भाषा उच्चरित ध्वनि–संकेतों की व्यवस्था पर आधारित है; यथा–'कमल' शब्द में 'क', 'आ', 'म', 'अ' तथा 'ल' का उच्चारण कैसे होता है? इस पर ही ध्यान दिया जाता है। Knife, But तथा Put उच्चरित ध्वनि संकेतों का भी ध्यान रखना पड़ता है। लिपि में लिखित स्वन चिह्नों की व्यवस्था पर ध्यान रखते हैं; यथा–यदि म् + इ+ ल् + अ + न् + अ आधारित शब्द का उच्चारण होगा, तो 'मिलन' रूप में लिखा जाएगा।

2. शक्ति–भाषा के वाचिक या मौखिक रूप में वक्ता और श्रोता का होना अनिवार्य है। ऐसी भाषा में वक्ता और श्रोता को एक ही स्थान पर और एक ही समय में होना अनिवार्य है। मौखिक भाषा में कविता की भंगिमा और अंग प्रचलन के आधार पर भावाभिव्यक्ति अधिक गंभीर होती है। वात्सल्य, प्रेम आदि की वार्ता में इसे अनुभव किया जा सकता है। यंत्र–आधारित दूरभाष ऐसी भाषा में यंत्र का माध्यम आवश्यक है। लिपि में श्रोता का होना अनिवार्य नहीं है। लिपि में समय तथा स्थान की सीमा पार करने की शक्ति होती है, अर्थात् यदि कोई बात आज लिपि बद्ध कर सुव्यवस्थित कर दी जाए, तो वर्षों बाद भी पढ़ी जा सकती हैं। एक स्थान पर लिपिबद्ध की गई बात देश–विदेश के किसी अन्य स्थान पर पहुँचाई जा सकती है।

3. इंद्रिय संबंध – भाषा का ज्ञान प्राप्त करने के लिए कर्णेंद्रिय मुख्य आधार है, जबकि लिपि के मुख्य संग्राहक इंद्रिय – चक्षु है।

4. समष्टि रूप – भाषा में विभिन्न ध्वनियों की व्यवस्था होती है, इससे यह ध्वनियों का समष्टि रूप है। लिपि में विभिन्न लिपि–चिह्नों की व्यवस्था होती है, अतः यह लेखिम–चिह्नों का समष्टि रूप है।

5. योग तत्त्व – भाषा के माध्यम से भावाभिव्यक्ति हेतु ध्वनि उत्पादक मुख्य अंगों का संयुक्त योगदान होता

है; यथा – क वर्ग की व्यंजन ध्वनियाँ जीभ के पश्च भाग से उच्चरित होती है। इसमें श्वास नली के कंठ भाग का विशेष योगदान होता है। इसलिए इसे कंठ्य ध्वनि भी कहा जाता है। तवर्ग की व्यंजन ध्वनियों का उच्चारण दाँत तथा जीभ के सहयोग से होता है जबकि स्वास नली की भी अपनी भूमिका होती है। लिपि में लेखनी, स्याही, रंग, तूलिका, कागज, छेनी, पत्थर आदि में से कुछ एक का संयुक्त योगदान होता है।

6. अभिव्यक्ति आधार – भाषा में भावाभिव्यक्ति हेतु स्वनों का उपयोग किया जाता है। स्वन के अभाव में भाषा का अस्तित्व संदिग्ध हो जाएगा। लिपि में भावाभिव्यक्ति के लिए वर्ण और अंक–लिपि–चिह्नों का उपयोग किया जाता है।

7. लिपि–भाषा संबंध – किसी भाषा के लिए किसी लिपि–विशेष का अनिवार्य संबंध नहीं होता है। हिंदी भाषा की लिपि देवनागरी या नागरी है, किंतु इसे रोमन लिपि में भी लिख सकते हैं;

यथा – लिपि की समस्याएँ – Lipi ki samasyan अंग्रेजी भाषा की लिपि रोमन है, किंतु इसे नागरी लिपि में भी अंकित कर सकते हैं; यथा –

I am going > आई ऐम गोइंग।

8. विकास क्रम – भाषा प्रारंभ में संकेताधार पर शुरू हुई और धीरे–धीरे स्वनात्मक स्थिति में आ गई। सांकेतिक भाषा का रूप आज भी मिलता है; यथा–हरी झंडी या बत्ती का अर्थ–आगे बढ़ना या मार्ग साफ है, तो लाल झंडी या लाल बत्ती का अर्थ–रुकिए या मार्ग अवरुद्ध है। लिपि का प्राचीनतम रूप चित्रात्मक था; यथा–सूर्य के भाव को प्रकट करने के लिए एक गोला और उसके चारों ओर निकलती रेखाएँ (किरणें) बनाई जाती हैं। विकास–क्रम में संकेत लिपि का आविष्कार हुआ; यथा–पर्वत को स्पष्ट करने के लिए खड़ी रेखाओं का प्रयोग। लिपि के दोनों ही स्तर भावात्मक थे। वर्तमान लिपि, चिह्नों पर आधारित है। इस प्रकार भाषा तथा लिपि का स्वनों से अटूट संबंध है।

9. भाव–संबंध–भाव तथा भाषा का सीधा संबंध है, किंतु लिपि तथा भाव का सीधा संबंध न होकर भाषा के माध्यम से ही होता है। यह तथ्य इससे भी स्पष्ट होता है कि भाषा के अभाव में लिपि का अस्तित्व भी असंभव हो जाएगा।

10. व्यवस्था–स्वनों की व्यवस्था से भाषा का रूप निर्धारित होता है और भाषा की शुद्धता, स्पष्ट, स्थिरता आदि लिपि से ही संभव होती है। भाषा में यदि लिपि–व्यवस्था न हो तो स्वनों का उच्चारण इच्छानुसार, मनमाने ढंग से होगा और भाषा अव्यवस्थित हो जाएगी।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि भाषा तथा लिपि में अत्यंत निकट का संबंध है। लिपि के आधार से ही लिखित भाषा का रूप सामने आया है। यह ही भाषा का सर्वोत्तम रूप है क्योंकि लिखित भाषा में स्थान और समय पार करने की शक्ति होता है।

5.4 व्यतिरेकी भाषाविज्ञान

मनुष्य और भाषा का आपस में अभिन्न संबंध है। भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन को भाषाविज्ञान कहते हैं। भाषाविज्ञान की नवीन और महत्त्वपूर्ण दिशा है – व्यतिरेकी भाषाविज्ञान। व्यतिरेकी शब्द व्यतिरेक से बना है। यह भाषा–अध्ययन की विशेष दिशा से संबंधित है।

5.5.1 व्यतिरेक : व्युत्पत्ति एवं अर्थ

'व्यतिरेक' शब्द रिच धातु से 'वि' उपसर्ग और 'घ ा' प्रत्यय के योग से इस प्रकार बना है –

वि – अति / रिच् + ध ा

व्यतिरेक को भेद, अंतर, भिन्नता, अलगाव, असमानता, असादृश्य आदि अर्थों में प्रयोग किया जाता है।

5.5.2 व्यतिरेकी भाषाविज्ञान : परिभाषा और स्वरूप

व्यतिरेक के शाब्दिक अर्थ के आधार पर कहा जा सकता है कि भाषायी भिन्नता या असमानता प्रकट करने वाले विज्ञान को व्यतिरेकी भाषाविज्ञान कहते हैं। इसे इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है।

'किन्हीं दो भाषाओं या बोलियों की संरचनात्मक भिन्नता या असमानता को रेखांकित करना व्यतिरेकी भाषा–अध्ययन है।'

तुलनात्मक अध्ययन में दोनों भाषाओं की आपसी समानताओं के साथ असमानताओं का विवेचन किया जाता है, किंतु व्यतिरेकी भाषा–अध्ययन में दोनों भाषाओं की समानताओं पर ध्यान न देकर असमानताओं या भिन्नताओं की ही विवेचना की जाती है।

प्रत्येक भाषा की अपनी विशेषताएँ होती हैं। जिस प्रकार किन्हीं दो व्यक्तियों में पूर्ण समानता होना असंभव है, उनमें कुछ भिन्नता होना निश्चित है। वह भिन्नता कितनी भी सूक्ष्म हो सकती है। इसी प्रकार दो भाषाओं या बोलियों में अवश्यमेव भिन्नता होती है। अन्य भाषाओं से प्रकट होने वाली ये भिन्नताएँ ही उस भाषा की अपनी पहचान होती हैं।

व्यतिरेकी भाषा–अध्ययन में सर्व प्रथम दो भाषाओं या दो बोलियों या एक भाषा और एक बोली का चयन करना होता है। जब अध्ययनकर्ता अपनी मातृभाषा के साथ किसी एक अन्य भाषा का व्यतिरकी विवेचन करता है, तो दोनों की समान विशेषताओं को छोड़ कर भिन्नताओं की ही विवेचना करता है। यह ही व्यतिरेकी भाषा–अध्ययन है। अध्ययनकर्त्ता की मातृभाषा स्रोत भाषा होती है और दूसरी भाषा लक्ष्य भाषा होती है। व्यतिरेकी अध्ययन आधार से द्वितीय भाषा शिक्षण सरल हो जाता है।

भारतवर्ष में हिंदी राजभाषा, राष्ट्रभाषा, जन भाषा और संपर्क भाषा रूपों में अभिव्यक्ति का आधार बनी हुई है। इस महत्त्व को देखते हुए 'हिंदी–मराठी', 'हिंदी–पंजाबी', 'हिंदी–कन्नड़', 'हिंदी–भोजपुरी', 'हिंदी–हरियाणवी' और 'हिंदी–अवधी' आदि व्यतिरेकी अध्ययन हो भी चुके हैं। इस प्रकार के अध्ययन से अपनी भाषा से इतर अन्य। भाषा या बोली की संरचना और विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त करना सहज हो जाता है।

5.5.3 व्यतिरेकी अध्ययन की दिशाएँ

भाषा की संरचना में स्वन, वर्ण, अक्षर, शब्द, पद और वाक्य आदि विभिन्न इकाइयों का अपना महत्त्व है। इनमें से किसी एक के अभाव में भाषा का स्वरूप संदिग्ध हो जाएगा। व्यतिरेकी अध्ययन किन्हीं दो भाषाओं की किसी एक इकाई या एकाधिक इकाइयों के आधार पर किया जा सकता है। भाषायी इकाइयों के आधार पर व्यतिरेकी अध्ययन को निम्नलिखित मुख्य वर्गों में विभक्त कर सकते हैं–

1. स्वन–व्यतिरेकी अध्ययन

भाषा की लघुतम महत्त्वपूर्ण इकाई स्वन है। इसी के आधार पर अन्य बृहत्तर इकाइयों की संरचना होती है। जब दो भाषा या दो बोली या एक भाषा और एक बोली के स्वनों की असमानताओं का अध्ययन किया जाता है, तो उसे 'स्वन व्यतिरेकी' अध्ययन की संज्ञा दी जाती है। उदाहरणार्थ – हिंदी–संस्कृत स्वन–व्यतिरेक– हिंदी में संस्कृत से भिन्न 'ड़' और ढ़ व्यंजन स्वन हैं, तो संस्कृत में हिंदी से भिन्न ऋ स्वर स्वन है।

अवधी–ब्रज (बोली) स्वन – व्यतिरेक – अवधी यदि इकार और उकार स्वन बहुला बोली है, तो व्रज औकार और ओकार स्वन बहुला बोली कैं यथा– सुरुजु (सूर्य) – अवधी, ऊधौ (उद्धव) – ब्रज

2. शब्द–व्यतिरेकी अध्ययन

भाषा की स्वतंत्र, सार्थक और महत्त्वपूर्ण इकाई शब्द है। जब किन्हीं दो भाषाओं, दो बोलियों अथवा एक भाषा और एक बोली की शब्दावली की आपसी भिन्नता का विवेचन और विश्लेषण किया जाता है, तो शब्द–व्यतिरेकी अध्ययन होता है। इस अध्ययन से द्वितीय भाषा के शब्दों का ज्ञान सरल हो जाता है : यथा– हिंदी–उर्दू शब्द व्यतिरेक – अरबी और फारसी बना संकर शब्द हिंदी में 'तालुकदार' प्रयुक्त होता है, उर्दू में स्वरूप है – 'तअल्लुकःदार'।

हिंदी (भाषा) – हरियाणवी (बोली) शब्द व्यतिरेक – हिंदी में बालक शब्द का प्रयोग किया जाता है। यह परंपरागत तत्सम शब्द है। हरियाणवी में यह शब्द 'बाळक' के रूप में प्रयुक्त होता है।

3. पद व्यतिरेकी अध्ययन

भाषा की व्याकरणिक योग्यता प्राप्त इकाई पद है। जब शब्द वाक्य में प्रयुक्त होने योग्य स्वरूप पा लेता है या वाक्य में प्रयुक्त हो जाता है, तो उसे पद कहते हैं। जब दो भाषाओं या बोलियों की आपसी तुलना करते हुए उनकी भिन्नता की विवेचना करते हैं, तो पद व्यतिरेकी अध्ययन होता हैः उदाहरणार्थ – हिंदी–संस्कृत पद–व्यतिरेक – हिंदी नियोगात्म भाषा है। इसलिए पद के अर्थ तत्त्व और संबंध तत्त्व अलग–अलग लिखे जाते हैं। संस्कृत संयोगात्मक भाषा है। इसलिए इसके पद के अर्थ और संबंध तत्त्व एक साथ एक शिरोरेखा आधारित होते हैं–

हिंदी	संस्कृत
वृक्ष से पत्ते गिरते हैं।	वृक्षात् पत्राणि पतन्ति।

हरियाणवी–अवधी पद–व्यतिरेक–बोली के विभिन्न पदों में संरचनात्मक और ध्वन्यात्मक विविधता होती है। क्रिया पदों में सर्वाधिक भिन्नता समापिका क्रिया में होती है। हरियाणवी अवधी संदर्भ रेखांकन योग्य है –

'दस बजने वाले है' मानक हिंदी के इस वाक्य के क्रिया पद

हरियाणवी	अवधी
दस बजण आले सैं।	दस बजनवाले अहंय।

4. वाक्य व्यतिरेकी अध्ययन

भाषा की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पूर्ण सार्थक इकाई वाक्य है। वाक्य की रचना में भाषा की सभी लघुतर से लघुतम इकाइयों का योग होता है। इस प्रकार भाषा के वाक्य व्यतिरेकी अध्ययन में अन्य इकाइयों का अल्पाधिक व्यतिरेकी रूप सामने आ जाता है, किंतु वाक्य की अपनी विशेष संरचना होती है, उसका व्यतिरेकी अध्ययन होता है। सभी भाषाओं में सरल, संयुक्त और मिश्र वाक्यों, के आधार पर भावाभिव्यक्ति होती है। प्रत्येक भाषा के वाक्यों की अपनी कुछ ऐसी विशेषताएँ होती हैं, जो अन्य भाषाओं में नहीं होती हैं। वाक्य व्यतिरेकी अध्ययन में इस दृष्टि से विश्लेषण किया जाता है।

हिंदी वाक्य–रचना में कर्ता, कर्म और क्रिया की नियमानुसार योजना होती है। प्रायः प्रत्येक भाषा की वाक्य संरचना भिन्न–भिन्न होती है।

हिंदी–अंग्रेजी वाक्य–व्यतिरेक

हिंदी	अंग्रेजी
मैं आम खाता हूँ।	I eat mango.
कर्ता कर्म किया	कर्ता क्रिया कर्म

दो भाषाओं के इन वाक्यों के व्यतिरेकी अध्ययन से स्पष्ट होता है कि हिंदी वाक्य में सामान्यतः कर्ता, कर्म और क्रिया का क्रमशः प्रयोग किया जाता है, तो अंग्रेजी वाक्य में इससे भिन्न कर्त्ता, क्रिया और कर्म का क्रमशः प्रयोग होता है।

हिंदी–संस्कृत वाक्य–व्यतिरेक

हिंदी का उद्‌भव संस्कृत से हुआ है, किंतु दोनों भाषाओं की कई प्रवृत्तियों में पर्याप्त भिन्नता है। संस्कृत भाषा को सर्वाधिक प्रभावी व्याकरण–सम्मत भाषा वर्ग में स्थान दिया जाता है। इस प्रकार स्प्ष्ट होता है कि संस्कृत वाक्य–रचना विशेष वैज्ञानिक और लचीली है। यह तथ्य दोनों भाषाओं की वाक्य संरचना से स्पष्ट होता है।

हिंदी के वाक्यों में उस भाषा का वियोगात्मक या अश्लेषात्मक रूप विद्यमान होता है। इसलिए सामान्य वाक्य की एक ही व्यवस्था होती है; यथा 'वृक्ष से पते गिरते हैं। वाक्य में 'वृक्ष से', 'पत्ते' और 'गिरते हैं' तीन पद हैं और उन पदों की क्रमिक व्यवस्था भी यही रहेगी। पद–स्थान बदलने से बलाघात के प्रभाव से अर्थ बदल जाता है : यथा– 'पते वृक्ष से गिरते हैं'। प्रयोग करने से पत्ते पर बलाघाट होता है। इससे 'पत्ते गिरते हैं और कुछ नहीं' अर्थ–बोध होता है। यही वाक्य यदि संस्कृत में प्रयोग किया जाए, तो वाक्य होगा –

'वृक्षात् पत्राणि पतन्ति।'

संस्कृत में इस वाक्य को पद–स्थान परिवर्तन के साथ निम्नलिखित रूपों में भी प्रयुक्त किया जा सकता है–

वृक्षात् पतन्ति पत्राणि।

या

पतन्ति पत्राणि वृक्षात्।

या

पतिन्त वृक्षात् पत्राणि।

या

पत्राणि वृक्षात् पतन्ति।

या

पत्राणि पतन्ति वृक्षात्।

इस प्रकार दोनों भाषाओं के वाक्यों का व्यतिरेकी अध्ययन करने से उनकी विशेषताएँ सामने आ जाती हैं और उनकी संरचना का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है।

व्यतिरेकी भाषाविज्ञान का महत्त्व

भारतवर्ष बहुभाषी देश है। वैश्वीकरण के युग में देश के ही नहीं विदेशी भाषाभाषियों से भी संवाद करना पड़ता है। अनेक संदर्भों में दूसरी भाषाओं से ज्ञानार्जन की अपेक्षा होती है। ऐसे में मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भाषाओं का ज्ञान अपेक्षित होता है। व्यतिरेकी भाषाविज्ञान से दो भाषाओं की भिन्नता के आधार पर उनका सीखना आसान हो जाता है। डॉ0 हरदेव बाहरी ने भाषा शिक्षण में व्यतिरेकी भाषाविज्ञान का महत्त्व स्पष्ट करने हुए लिखा है, "किन्हीं दो भाषाओं या बोलियों की सारी संरचना एक ही नहीं होती। दोनों के अंतर का विश्लेषण कर लेने से द्वितीय भाषा

सीखने से आसानी हो जाती है। .... वास्तव में दो भाषाओं की भिन्नता या असमानता को उभारना ही व्यतिरेकी विश्लेषण का प्रयोजन है।"

यह सच है कि द्वितीय भाषा के वे अभिलक्षण जो मातृभाषा से भिन्न अथवा असमान होते हैं, वे ही उस भाषा को सीखने में कठिनाई उत्पन्न करते हैं। जब व्यतिरेकी भाषाविज्ञान से उनका ज्ञान प्राप्त कर लिया जाता है, तो उन्नत भाषा का शिक्षण सरल हो जाता है। इस प्रकार व्यतिरेकी भाषाविज्ञान द्वितीय भाषा या बोली शिक्षण का महत्त्वपूर्ण आधार है।

5.5 समाज भाषाविज्ञान

मनुष्य की परम उपलब्धि भाषा है। भाषा के ही माध्यम से समाज का निर्माण हुआ है। भाषा पर गंभीर चिंतन करने से स्पष्ट होता है कि भाषा का जन्म समाज में हुआ और उसका प्रयोग भी समाज में होता है। भाषा के अभाव में समाज का अस्तित्व असंभव है, तो समाज के अभाव में भाषा की स्थिति भी संदिग्ध हो जाएगा। इस प्रकार कहा जा सकता है कि भाषा और समाज का अभिन्न संबंध है और दोनों अन्योन्याश्रित है। भाषा और समाज के निर्माण और उसकी गतिशीलता के केंद्र में मनुष्य है। इस प्रकार भाषा, अध्ययन और विश्लेषण के लिए समाजविज्ञान को आधार बनाना आवश्यक है। इससे समाज भाषाविज्ञान का महत्त्व स्वतः स्पष्ट हो जाता है।

परिभाषा :

विभिन्न विद्वानों ने समाज और भाषा के विशेष संबंधों को रेखांकित करते हुए समाज भाषाविज्ञान को इस प्रकार परिभाषित किया है–

1. डॉ. दिलीप सिंह ने भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों और उनके अनुप्रयोगों को दृष्टिगत कर लिखा है, ''भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों का अनुप्रयोग जब भाषा की प्रकृति और उसके अपने अपने प्रयोजनों को साधने के लिए किया जाता है, तब उसे समाज भाषाविज्ञान कहा जाता है।''

2. डॉ. रवींद्रनाथ श्रीवास्तव ने भाषा और सामाजिक व्यवस्था के बीच की सहसंकल्पना को ध्यान में रखकर इस प्रकार परिभातिष किया है– ''समाज भाषाविज्ञान, समाजशास्त्र और भाषाविज्ञान के मात्र अवमिश्रण का परिणाम नहीं और न ही उसका उद्देश्य सामाजिक व्यवस्था और भाषिक व्यवस्था के बीच संकल्पना की स्थिति पर प्रकाश डालता है।''

3. डॉ. मोतीलाल गुप्त ने भाषा और समाज के सांस्कृतिक रूपों को संबंधित बताते हुए लिखा है, ''समाज भाषाविज्ञान भाषा की आकृति और उसके प्रयोग को समाज के सभी सांस्कृतिक रूपों से संबंधित करता है।''

मेरे विचार से समाज भाषाविज्ञान को इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं–

''भाषाविज्ञान में जब समाज के संदर्भो परिस्थितियों और प्रयोजनों में प्रयुक्त और विकसित भाषा–स्वरूप का अध्ययन किया जाता है, तो उसे समाज भाषाविज्ञान कहते हैं।''

प्रत्येक समाज की अपनी व्यवस्था, संस्कृति और सभ्यता होती है। इन आधारों की भिन्नता पर उनके व्यवहार और उनकी भाषा में भिन्नता होना सुनिश्चित है। भाषा एक ओर भाव और विचारों की अभिव्यक्ति का आधार है, तो दूसरी ओर हमारे विचारों के निर्धारण की भूमिका निभाती है। भाषा के आधार पर प्रयोक्ता के विचारों का आभास हो जाता है। यह निर्विवाद सत्य है कि हम जिस प्रकार की भाषा का प्रयोग करते हैं, हमारे चिंतन और विचार का स्वरूप भी वैसा ही होता है।

जिस प्रकार व्यक्ति विशेष की भाषा से उसके व्यक्तित्व और विचारों का ज्ञान होता है, उसी प्रकार किसी भी समाज की भाषा के आधार पर उस समाज की संरचना और स्वरूप का स्पष्ट ज्ञान होता है।

स्वरूप

सामाजिक संदर्भो की भिन्नता पर भाषा में अर्थ–परिवर्तन होता रहता है। एक ही व्यक्ति जब समान भाषा का प्रयोग भिन्न–भिन्न परिस्थितियों में करता है, तो विभिन्न लोगों को भिन्न–भिन्न अर्थ का बोध होता है। समाज भाषाविज्ञान वक्ता, श्रोता, परिस्थिति और संस्कृति के आधार पर विकसित होने वाले भाषायी स्वरूप और अभिव्यक्ति पर विचार किया जाता है। समाज भाषाविज्ञान की निम्नलिखित प्रवृत्तियाँ सामने आती है–

1. समाज और भाषा का अंतःसंबंध

समाज, मनुष्य और भाषा का निकटतम संबंध होता है। इनके पारस्परिक संबंधों के ही आधार पर उनके विकसित रूप सामने आते हैं। गाँव और शहर के समाज और उनकी भाषा के स्वरूप की भिन्नता से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है। समाज भाषाविज्ञान से यह स्पष्ट होता है कि भाषा निश्चय ही सामाजिक संदर्भो की सापेक्ष व्यवस्था है। उसकी प्रकृति में सामाजिक तत्त्वों की अंतर्धारा होना निश्चित है। जिस प्रकार मनुष्य समाज का अभिन्न अंग है उसी प्रकार भाषा समाज का अभिन्न अंग है। इस प्रकार स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि समाज भाषाविज्ञान में भाषा और उससे संबंधित समाज की संरचनाओं की समानांतरता के अंतःसंबंधों का अध्ययन किया जाता है।

2. भाषा व्यवस्था और व्यवहार

मानक भाषा का व्याकरण सम्मत रूप होना अनिवार्य है, किंतु समाज भाषा के लिए व्याकरण की अनिवार्यता नहीं होती है। यहाँ सामाजिक संदर्भो पर भाषा का स्वरूप विकसित होता है। समाज भाषा में संप्रेषण को अधिक महत्त्व दिया जाता है। इसलिए समाज भाषा की व्यवस्था सामाजिक व्यवहार पर आधारित होती है। सामाजिक संकल्पना और संस्कृति को अपना कर समाज भाषा गतिशील रहती है। सामाजिक ज्ञान के ही आधार पर समाज भाषा के शब्द या वाक्य का शुद्ध या व्यावहारिक प्रयोग संभव है। समाज भाषा प्रयोग में वक्ता को स्वयं की स्थिति के साथ श्रोता, समय और परिस्थिति आदि का ध्यान और ज्ञान अनिवार्य होता है; यथा–हरियाणा में पिता के बड़े भाई या उनसे बड़े व्यक्ति को 'ताऊ जी' कहते हैं। यदि ऐसे व्यक्ति को 'अंकल' या 'चाचा' कहा जाए, तो अव्यावहारिकता और अज्ञानता सिद्ध होगी। इस प्रकार समाज भाषाविज्ञान में सामाजिक व्यवहार के आधार पर समाज भाषा का अध्ययन किया जाता है।

3. संप्रेषण दक्षता

समाज भाषा की विविधता उसकी अपनी विशेषता है। इसमें वक्ता को ध्यान रखना होता है कि कौन, कब, कहाँ, किन परिस्थितियों में और किससे बात कर रहा है। समाज भाषा–प्रयोग की क्षमता सतत प्रयोग से बढ़ती है। संप्रेषण दक्षता से सामाजिक भाषा की बोधगम्यता प्रभावी रूप में सामने आती है। जिस प्रकार मानक भाषा में कोडीकरण और डिकोडीकरण की प्रक्रिया चलती है, उसी प्रकार समाज भाषा में भी यह प्रक्रिया चलती है। समाज भाषा में शैली का प्रभावी रूप संप्रेषण दक्षता का सहयोगी रूप है, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की संप्रेषण कला (बोली/संवाद) अपने रंग की होती है। वास्तव में संप्रेषण कला ही सामाजिक व्यवहार का आधार है। किसी एक भाषाभाषी समाज के सभी सदस्यों के लिए यह अनिवार्य नहीं कि सभी संप्रेषण की एक शैली या व्यवस्था से बँधे रहें। हिंदी भाषी समाज पर दृष्टिपात करें, तो शहरवासी हिंदी का संभावित मानक रूप अपनाती है। वहाँ उच्च शिक्षित वर्ग अंग्रेजी संक्रमित हिंदी अपनाता है, तो सामान्य और निम्न वर्ग सामान्य भाषा को संप्रेषणीयता का आधार बनाता हैं। गाँव का व्यक्ति बोली को अभिव्यक्ति का आधार बनाता है। इस प्रकार समाज भाषाविज्ञान में विभिन्न संदर्भो की संप्रेषण दक्षता का अध्ययन किया जाता है।

4. प्रोक्ति–महत्त्व

भाषाविज्ञान में वाक्य को सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता है। इसका कारण है कि वाक्य को भाषा की 'पूर्ण सार्थक इकाई' की संज्ञा दी गई है। निश्चय ही व्याकरण के अनुसार भी भाषा की महत्तम इकाई वाक्य है। समाज भाषाविज्ञान में कुशल संप्रेषणीयता और स्पष्ट भाव अभिव्यक्ति को महत्त्व दिया जाता है। ऐसे में वाक्य की सीमा न होकर एकाधिक वाक्य शृंखलाबद्ध प्रयुक्त होकर भावाभिव्यक्ति में भूमिका निभाते हैं। भावाभिव्यक्ति में विविध वाक्यों की विशेष संरचना को आचार्य विश्वनाथ ने 'महावाक्य'; डॉ. रामचंद्र वर्मा और डॉ. रवींद्रनाथ श्रीवास्तव वाक्यबंध (Discourse) कहा है। समाज में स्पष्ट भावाभिव्यक्ति के लिए शृंखलाबद्ध कई–कई कार्यों का प्रयोग संभावित है। इस प्रकार समाज भाषाविज्ञान में वाक्य से वृहत्तर अर्थात भाषा की महत्तम इकाई–प्रोक्ति को सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता है।

5. विकल्पत प्रकृति

बहुभाषी भारतवर्ष में विविध भाषाओं का प्रयोग होता है, तो भाषा की विविध बोलियों में भी भिन्नता दिखाई देती है। यह अध्ययन भाषाविज्ञान में किया जाता है। समाज भाषाविज्ञान में एक ही व्यक्ति अपने से बड़ों के साथ कैसे संवाद करता है और छोटों के साथ कैसे संवाद करता है? इसका अध्ययन कर उसकी विकल्पन स्थिति का अध्ययन करते हैं। इसी प्रकार एक ही व्यक्ति द्वारा माता–पिता के साथ, पुत्र–पुत्री के साथ, मित्र के साथ, पत्नी के साथ, नौकर के साथ और अपने अधिकारी आदि के साथ किस प्रकार की भाषा का प्रयोग करता है? इसे समाज भाषा की विविधता भी कह सकते हैं। एक शिक्षक जब कक्षा में अध्यापन कार्य करता है, तो भाषा का एक रूप होता है, वह जब बाजार में कुछ खरीदता है, तो समाज भाषा का दूसरा रूप होता है। यह समाज भाषाविज्ञान के अध्ययन की विशेष प्रकृति है। ऐसे अध्ययन में व्यावहारिकता और स्वाभाविकता का प्रभावी रूप होता है।

समाज भाषाविज्ञान की दिशाएँ

समाज में रहकर मनुष्य उन्नति करता है। व्यक्ति और समाज की उन्नति का मूलाधार भाषा है। इस प्रकार समाजभाषा और समाज भाषाविज्ञान का महत्त्व स्वतः स्पष्ट हो जाता है। समाज भाषाविज्ञान की अनेक दिशाएँ है, जिनमें कुछ प्रमुख हैं –

1. सामाजिक संरचना–आधार

समाज को वर्ग, समय, परिस्थिति, स्थान या क्षेत्र, उम्र और पद आदि आधारों पर विभक्त रूप में देख सकते हैं। एक ही भाषाभाषी समाज में शिक्षित, अल्पशिक्षित और अशिक्षित वर्ग मिल जाते हैं। उनकी भाषा की संरचना में बहुत अंतर होता है। इसी प्रकार समाज में हर्ष ओर विषाद (शोक) की परिस्थितियों का क्रम चलता रहता है। दोनों परिस्थितियों की समाजभाषा में हर्ष और विषाद का प्रभाव होना स्वाभाविक है। हास्य और रुदन का समाज भाषावैज्ञानिक अध्ययन इस गंभीर तथ्य को उजागर करता है। इसी प्रकार कार्यालयी परिवेश में अधिकारी और कर्मचारी के सहज और व्यावहारिक संवाद की भाषा की संरचना–भिन्नता विशेष उल्लखेनीय है।

2. समाज भाषा–नियंत्रण–आधार

समाज भाषा का अनुकूल ज्ञान समाज को अनुकूल गति, प्रयोक्ता और श्रोता को सहानुभूति और प्रसन्नता प्रदान करता है। ऐसे में भाषा–प्रयोक्ता ध्यान रखता है कि कहाँ, कैसे और किन परिस्थितियों में बात कर रहा है, इसका ध्यान रखता है। अंग्रेजी के 'you' शब्द के लिए मानक हिंदी में 'तू', ''तुम' और 'आप तीन शब्दों के प्रयोग होते हैं। भाषाविज्ञान के अनुसार 'तू' शब्द का प्रयोग छोटों से संवाद में, प्रेम और क्रोध में किया जाता है, तुम शब्द का प्रयोग

उम्र योग्यता, पद आदि की समकक्षता में किया जाता है, तो आप बड़ों के लिए किया जाता है। आंचलिक भाषाओं में प्रायः 'आप' का प्रयोग नहीं होता है। ऐसी समाज भाषा में 'तुम' शब्द का प्रयोग बड़ों के लिए आदर के लहजे में कर सामाजिक व्यवस्था को दिशा दी जाती है। 'तू' का प्रयोग प्रेम और क्रोध में तो करते ही हैं, यथा–भगवान को 'तू दानि हौं भिखारी', क्रोध में–'तू, बाहर आ, तो बताऊँ' आदि। सामान्य लहजे में 'तू' से सामान्य भाव भी प्रकट होता है; यथा–'तू आ जाना, मैं चला।'

3. समाज भाषा का प्रभावोत्पादक आधार

सामाजिक व्यक्ति में जहाँ आत्म–सम्मान का भाव होता है, वहीं वह अपनी स्थिति, परिस्थिति, पद और उम्र आदि को भुला कर विनम्रता के आधार पर प्रभावोत्पादक सामाजिकता अपनाता है; उदाहरणार्थ–यदि कोई वरिष्ठ कर्मचारी अपने अधिकारी के घर जाता है और उसका 3–4 वर्षीय बेटा बाहर लॉन में खेल रहा हो, तो वह बच्चे से पूछता है, ''आप के पापा जी घर हैं?'' वह खेल में मस्त रहते हुए उत्तर देता है, ''हाँ।'' कर्मचारी फिर पूछता है, ''आप का नाम क्या है?'' इस संवाद की भाषा पर विचार करें, तो देखेंगे कि कर्मचारी उस बच्चे से उम्र, शिक्षा, योग्यता, अनुभव आदि में बहुत बड़ा है। इसके बाद भी बच्चे को आप', 'आप' शब्द का प्रयोग करता है। यह अध्ययन ही समाज भाषाविज्ञान का विषय है। वह 3–4 वर्ष का बालक सामाजिक परिवेश में आधिकारिक संदर्भ से जुड़ा है। इसलिए भाषा प्रयोक्ता विनम्रता से प्रभावित करने वाली सामाजिक भाषा का प्रयोग कर उसे 'आप' संबोधित करता है। लखनऊ की नवाबी तो कब की समाप्त हो चुकी है, किंतु वहाँ की सामाजिक भाषा की नजाकत और नफासत आज भी बहुत प्रभावित करती है। लखनऊ में जब एक व्यक्ति किसी को गाली देती है, तो वह गाली सुन कर प्रायः कहता है, ''आप मुझे गाली क्यों दे रहे हैं?'' वहाँ गाली देनेवाले को भी आप कहा जाता है।

इस प्रकार प्रभावोत्पादक भाषा का अध्ययन समाज भाषाविज्ञान की विशेष दिशा है।

4. समाज भाषा का उच्चारणात्मक आधार

समाज भाषा का सर्वाधिक रूप वाचिक होता है। इसलिए इसका उच्चारणात्मक अध्ययन विशेष महत्त्वपूर्ण है। इसके पक्षों में अंग–विक्षेप, संबंधसूचक शब्दावली और संबोधनात्मक शब्दावली विशेष उल्लेखनीय है। वाचिक अभिव्यक्ति में अंग–विच्छेप अर्थात् अंगों के प्रचलन का विशेष महत्त्व है। संवाद के समय भावानुसार हाथ–पैर आदि शरीरांगों में विशेष गति, मुख की विशेष भंगिमा अभिव्यक्ति में विशेष सहयोगी होती है। प्रेम–वर्ता में उँगली का स्पर्श, गले लग जाने का भाव उत्पन्न कर सकता है, तो शत्रु के साथ क्रोध भरे संवाद में उँगली का स्पर्श कट–मरने का दृश्य उपस्थित कर सकता है। प्रभावी संप्रेषण में अंग–विच्छेप का अध्ययन विशेष उपयोगी है।

समाज में रक्त संबंधी और सांस्कृति संबंधों की विशेष शब्दावली समाज भाषा की धरोहर है। हिंदी में माता–पिता, पति–पत्नी, भाई–बहन, चाचा–चाची, दादा–दादी, ताऊ–ताई आदि रक्त संबंधों की सामाजिकता और उनके महत्त्व प्रकट करने वाले शब्द हैं, तो मित्र साथी मालिक, नौकर, पुजारी, पादरी, पीर आदि सामाजिक कार्य और सांस्कृति आधार के शब्द हैं। ऐसी शब्दावली से सामाजिक व्यवस्था और संरचना का अध्ययन संभव होता है।

समाज में एक–दूसरे को संबोधित करने की महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है। इसलिए संबोधनात्मक शब्दावली का अध्ययन समाज भाषाविज्ञान का महत्त्वपूर्ण अंग है। सं बोधन प्रायः नाम या पद नाम से किया जाता है। समाज में वक्ता अपनी स्थिति और सामने वाले व्यक्ति के पद उम्र, स्थिति और परिस्थिति आदि को दृष्टि में देखकर उसे संबोधित करता है। आदर और सम्मान के लिए नाम और पदनाम के पूर्व या बाद में अथवा कभी–कभी पूर्ववर्ती और परवर्ती दोनों स्थानों पर विशेषण शब्द लगाए जाते हैं; यथा–

पूर्व में	बाद में
पुरुष – श्री / श्रीयुत	जी / साहब
स्त्री – श्रीमती / सुश्री	जी / साहिबा
पदनाम :	
पुरुष – आदरणीय, माननीय, सम्मानीय, श्रद्धेय	महोदय
स्त्री – आदरणीय, माननीय सम्माननीय, श्रद्धेय	महोदया

इस प्रकार समाज और भाषा की अभिन्नता को देखते हुए समाज भाषाविज्ञान का अध्ययन विशेष महत्त्वपूर्ण है। सामाजिक भिन्नता के ही समान संस्कृति, समय, परिस्थिति आदि की भिन्नता में विकसित समाजभाषा का अध्ययन समाज और भाषा अध्ययन का गरिमामय सेतु है।

5.6 सारांश

भाषा–अध्ययन में उसकी शारीरिक और आत्मा–स्वरूप अर्थ इकाई के अध्ययन के साथ उसके महत्त्वपूर्ण लिखित स्वरूप पर विचार अपेक्षित है। लिपि का आधार पाकर भाषा समय और स्थान पार करने की शक्ति से संपन्न हो जाती है। इसलिए लिखित भाषा संदर्भ से भाषा और लिपि के घटकों के संबंधों का अध्ययन है। भाषा के आधार पर साहित्य और ज्ञान विज्ञान के विषयों का अध्ययन संभव होता है। यहाँ भाषाविज्ञान और व्याकरण के साथ भाषाविज्ञान और साहित्य के अंतःसंबंधों का अध्ययन किया गया है। भाषाविज्ञान–चिंतन की अनेक दिशाएँ हैं। इनमें से समाज में व्यवहारिक रूप से प्रयुक्त भाषा का समाज भाषा वैज्ञानिक अध्ययन और दो या दो से अधिक भाषा, रचना या रचनाकार के साहित्य की भाषायी भिन्नता प्रकट करने वाले व्यतिरेकी भाषा वैज्ञानिक अध्ययन का परिचय कराया गया है।

इस प्रकार यह अध्ययन व्यक्तिगत और सामाजिक उन्नति करने वाली भाषा की भूमिका का परिचय हुआ है।

5.7 मुख्य शब्दार्थ

भाषा	–	उच्चरित या मौखिक भाषा
लिपि	–	भाषा–लेखन का आधार
विषय–संबंध	–	समानता–असमानता (विशिष्टता) परिचय
व्यतिरेक	–	भिन्नता या असमानता
व्याकरण	–	भाषा को व्यवस्था देने वाला शास्त्र
भाषाविज्ञान	–	भाषा का क्रमबद्ध, व्यस्थित, प्रयोगत्मक ज्ञान

5.8 स्वप्रगति परीक्षण

1. भाषा (उच्चरित) सामने उपस्थित व्यक्ति तक विचार या भाव पहुँचा पाती है।

2. लिपि वह आधार है, जो भाषा को स्थायित्त्व शक्ति प्रदान करती है।
3. लिपिबद्ध भाषा में समय और स्थान पार करने की शक्ति होती है।
4. व्याकरण एक भाषा से संबंधित होता है, जबकि भाषाविज्ञान एक भाषा, एकाधिक भाषा या समस्त मानवी भाषा से संबंधित हो सकता है।
5. व्याकरण में भाषा–विकास के क्या का उत्तर देता है, जबकि भाषाविज्ञान क्या के साथ क्यों का भी उत्तर देता है।
6. व्यतिरेकी भाषाविज्ञान में दो भाषा, दो रचना, दो रचनाकार की भाषा आदि की भाषायी भिन्नता का अध्ययन किया जाता है।
7. समाज भाषाविज्ञान में समाज में प्रयुक्त व्यावहारिक भाषा के स्वरूप और महत्त्व का अध्ययन किया जाता है।

5.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. भाषा और लिपि के घटकों का पारस्परिक संबंध स्पष्ट कीजिए।
2. भाषाविज्ञान और व्याकरण के संबंध का सोदाहरण परिचय दीजिए।
3. भाषाविज्ञान और साहित्य के संबंध का सोदाहरण विवेचन कीजिए।
4. व्यतिरेकी भाषाविज्ञान का स्वरूप स्पष्ट कीजिए।
5. समाज भाषाविज्ञान के स्वरूप का परिचय लिखिए।

5.10 पठनीय पुस्तकें

1. भाषा और हिंदी भाषा का इतिहास, डॉ0 नरेश मिश्र, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला, सन् 2006
2. भाषाविज्ञान और हिंदी भाषा – डॉ0 नरेश मिश्र, संजय प्रकाशन, दिल्ली, सन् 2016
3. भाषाविज्ञान और हिंदी – डॉ0 नरेश मिश्र, अभिनव प्रकाशन, दिल्ली, सन् 2014
4. भाषा और भाषाविज्ञान – डॉ0 हरिश्चंद्र वर्मा, लक्ष्मी पब्लिसिंग हाउस, रोहतक, सन् 2006
5. भाषाविज्ञान– डॉ0 भोलानाथ तिवारी, किताब महल, इलाहाबाद, सन् 2005
6. हिंदी : उद्‌भव, विकास और रूप, डॉ0 हरदेव बाहरी, किताब महल, इलाहाबाद, सन् 1980
7. भाषा और भाषिकी, डॉ0 देवी शंकर द्विवेदी, प्रशांत प्रकाशन, कुरुक्षेत्र, सन् 1974
8. सामान्य भाषाविज्ञान, डॉ0 बाबूराम सक्सेना, सुलभ साहित्यमाला, प्रयाग, सन् 1983